रमज़ान कैसे गुज़ारें ?

लेखक
ख़ुर्रम मुराद

अनुवादक
एस० कौसर लईक़

विषय-सूची

'बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम'

(अल्लाह के नाम से जो रहमान, रहीम है।)

भूमिका

रमज़ान का मुबारक महीना उन बड़ी नेमतों में से एक बहुत बड़ी नेमत है जो अल्लाह तआला ने मुस्लिम उम्मत को अता की हैं। इस महीने में अल्लाह तआला ने हमपर यह मेहरबानी की कि अपने रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को हमारी हिदायत व रहनुमाई के लिए पैग़म्बर बनाया। इस महीने में 'क़ुरआन मजीद' हमें दिया गया जो हिदायत है, फ़ुरक़ान है, सत्य-असत्य में स्पष्ट फ़र्क़ कर देनेवाला है, रहमत है, नूर है, शिफ़ा (रोगों से मुक्ति दिलानेवाला) है। इस महीने में बद्र का वह दिन उम्मत को नसीब हुआ जिसमें हक़ और बातिल को छाँटकर अलग कर दिया गया, जिस दिन उम्मत के लिए और इनसानियत के लिए ज़िन्दगी मुक़द्दर कर दी गई। जिनको ख़त्म होना था वे रौशन दलील के साथ ख़त्म हुए और जिनको ज़िन्दा रहना था वे रौशन दलील के साथ ज़िन्दा रहे। इस महीने में फ़तह का वह दिन भी आया, जिस दिन ख़ून का एक क़तरा बहाए बग़ैर उस शहर की कुंजियाँ उम्मत के हवाले कर दी गई जो "उम्मुलक़ुरा" यानी दुनिया की ज़िन्दगी का मरकज़ है, जो बैतुल्लाह (अल्लाह के घर) का अमानतदार, तौहीद (एकेश्वरवाद) के सिलसिले के इमाम, हज़रत इबराहीम (अलै०) की बन्दगी व वफ़ादारी की बेमिसाल रिवायतों का अमीन और अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की दावत का अमीन है।

उम्मत की ज़िन्दगी और सरबुलंदी का राज़ हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की शिक्षाओं को फैलाने के लिए जी तोड़ कोशिश और जिद्दोजुहद में छिपा है। पहले इनसानों के दिल जीतने के लिए जिद्दोजुहद, फिर तहज़ीबी ग़लबे के लिए जिद्दोजुहद... और इस जिद्दोजुहद के साथ-साथ कामयाबी के लिए अपने नफ़्स (मन) से जिद्दोजुहद, ताकि परहेज़गारी हासिल हो। इनफ़िरादी (व्यक्तिगत) परहेज़गारी भी और इजतिमाई (सामूहिक) परहेज़गारी भी। तन्हाइयों की रातों में ख़ुदा के आगे आँसू बहाना और गिड़गिड़ाना और पब्लिक लाइफ़ में और जनसमूह में सच्चाई, ईमानदारी, अमानतदारी, इनसाफ़, बहादुरी, भाईचारगी और इनसानी अधिकारों का सम्मान भी। रमज़ान इल्म और अमल का वह रास्ता है,

जिसके ज़रिए यह सब कुछ हासिल हो सकता है।

प्यारे नबी (सल्ल०) रमज़ान से पहले अपने साथियों को इस महीने के ख़ज़ाने से फ़ायदा उठाने के लिए तैयार करते थे। नबी (सल्ल०) के इसी मुबारक तरीक़े की पैरवी में कि शायद मेरा नाम भी कहीं आप (सल्ल०) की पैरवी करनेवालों के रजिस्टर में दर्ज हो जाए, मैंने कुछ साल पहले "रमज़ान का इस्तिक़बाल" के नाम से एक तक़रीर रिकार्ड कराई, उस तक़रीर का कैसेट उपलब्ध है। फिर जैसा कि प्रायः मेरे साथ होता है—उस तक़रीर को अन्ततः मैंने एक पुस्तिका का रूप दे दिया। अब उस पुस्तिका का हिन्दी अनुवाद आपके सामने है।

इस पुस्तिका में मैंने यह भी बताया है कि क़ुरआन मजीद से राह पाने और उसकी राह पर चलने के लिए जो तक़वा (परहेज़गारी) लाज़मी है, वह रातों को इबादत करने और रोज़ा रखने ही से हासिल होता है। मैंने रमज़ान से पूरी तरह लाभ उठाने के लिए दस तरीक़े भी बयान किए हैं और हर तरीक़े के तहत ऐसे आसान तरीक़े बयान करने की कोशिश की है, जिसपर मेरे ख़याल में एक आम आदमी भी आसानी से अमल कर सकता है।

अल्लाह तआला से दुआ है कि वह इस मामूली कोशिश को क़बूल फ़रमाए। मेरी किसी बात को मेरे ख़िलाफ़ दलील न बनाए। मैंने जो कुछ कहा है, उसपर मुझे अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए और पाठकों को भी। पाठकों से मेरा निवेदन है कि अगर आपको मेरी किसी बात से फ़ायदा पहुँचे तो अल्लाह से दुआ करें कि वह मेरा ख़ातिमा ईमान पर करे और मुझे अपनी रहमत और मग़फ़िरत से ढाँप ले।

—ख़ुर्रम मुराद

(1)

रमज़ान, क़ुरआन मजीद और तक़वा

हर साल हमारे ऊपर रमज़ान का मुबारक महीना आता है, जिसकी रहमतों की बारिश हमारी ज़िन्दगियों को शराबोर करने के लिए बरस रही होती है। उस महीने की बड़ाई और बरकत का क्या ठिकाना जिसे ख़ुद प्यारे नबी (सल्ल०) ने एक अज़ीम महीना और मुबारक महीना कहा हो, यानी बड़ी अज़मत व बड़ाईवाला और बरकतवाला महीना। न हम इस महीने की बुलन्दियों की कल्पना कर सकते हैं, न हमारी ज़बान उसकी सारी बरकतें बयान कर सकती हैं।

रमज़ान का मुबारक महीना अज़ीम क्यों?

इस महीने के दामन में वह अनमोल रात है कि इस एक रात में हज़ारों महीनों से बढ़कर भलाई और बरकत के ख़ज़ाने लुटाए गए और लुटाए जाते हैं। वह मुबारक रात जिसमें हमारे रब ने अपनी सबसे बड़ी रहमत हमारे ऊपर नाज़िल की—

"हमने इसे (रौशन किताब को) बरकतवाली रात में उतारा।"

(क़ुरआन, 44 : 3)

यह वाज़ेह और रौशन किताब (किताबे मुबीन) क्या है?—

"तुम्हारे रब की तरफ़ से रहमत ही रहमत।" (क़ुरआन)

लेकिन सच पूछिए तो इस महीने का हर दिन, मुबारक दिन है और इस माह की हर रात, मुबारक रात। दिन रौशन होता है तो अनगिनत बंदों को यह ख़ुशनसीबी हासिल होती है कि वे अपने मालिक की फ़रमाँबरदारी और ख़ुशी हासिल करने के लिए अपने जिस्म की जाइज़ ख़्वाहिशों और उसके ज़रूरी मुतालबों तक को छोड़कर गवाही देते हैं कि सिर्फ़ अल्लाह ही उनका रब है और उसको ख़ुश करना उनका मक़सद है। उसकी फ़रमाँबरदारी और बन्दगी की चाहत ही ज़िन्दगी की असल भूख प्यास है, और उसकी ख़ुशी और रज़ामन्दी ही में दिलों के लिए इतमीनान और रगों के लिए तरावट का सामान है। रात का अँधेरा छाता है तो अनगिनत बन्दे अल्लाह तआला के सामने खड़े हो जाते हैं और उससे बातें करते हैं और उसके गुणगान की मिठास और बरकत से

मालामाल होते हैं और उनके दिल शीशे के चिराग़ों की तरह रौशन होकर ऐसे जगमगाते हैं, जैसे आसमानों पर रात के सितारे—

"उसके नूर की मिसाल ऐसी है, जैसे एक ताक़ में चिराग़ रखा हो, चिराग़ एक फ़ानूस में हो, फ़ानूस का हाल यह हो कि जैसे मोती की तरह चमकता हुआ तारा. . . . (ऐसे लोग) जिन्हें तिजारत और ख़रीद व फ़रोख़्त अल्लाह की याद से और नमाज़ क़ायम करने और ज़कात देने से ग़ाफ़िल नहीं कर देती।" (क़ुरआन, 24 : 35-37)

इस महीने की हर घड़ी में रहमतों व बरकत का इतना ख़ज़ाना छिपा हुआ है कि अच्छा नफ़्ल अमल, फ़र्ज़ अमल के दर्जे को पहुँच जाता है और फ़र्ज़ अमल सत्तर गुना ज़्यादा वज़नी और बुलन्द हो जाता है। (हदीस : बैहक़ी)

रमज़ान आता है तो आसमान के दरवाज़े खोल दिए जाते हैं और रहमतों की बारिश होती है, जन्नत के दरवाज़े खोल दिए जाते हैं और नेकी के रास्तों पर चलने की सहूलत और तौफ़ीक़ आम हो जाती है। जहन्नम के दरवाज़े बंद कर दिए जाते हैं और रोज़ा बुराई के रास्तों की रुकावट बन जाता है। शैतानों को ज़ंजीरों में जकड़ दिया जाता है और बुराई फैलाने के मौक़े कम हो जाते हैं।
(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

इस तरह ख़ुशख़बरी दी है प्यारे नबी (सल्ल०) ने उस इनसान को जो रमज़ान मुबारक में रोज़े रखे कि उसके सारे अगले-पिछले गुनाह माफ़ कर दिए जाएँगे और उस इनसान को जो रातों में नमाज़ के लिए खड़ा रहे कि उसके भी गुनाह माफ़ कर दिए जाएँगे, और वह जो 'शबे क़द्र' में क़याम करे यानी उस रात में इबादत करे, उसके भी। बस शर्त यह है कि वह अपने रब की बातों और वादों को सच्चा जाने, अपने बंदगी के वादे को वफ़ादारी से मज़बूती और पायदारी के साथ निभाए और ख़ुद अपने को पहचानने और अपना जायज़ा ख़ुद लेते रहने से ग़ाफ़िल न रहे। (हदीस : मुस्लिम, बुख़ारी)

आपका हिस्सा

इस महीने की अज़मत और बरकत बेशक असीम है। लेकिन ऐसा भी नहीं है कि इसकी रहमतें और बरकतें हर उस शख़्स के हिस्से में आ जाएँ, जो इस महीने को पा ले। जब बारिश होती है तो अनेक नदी-नाले और तालाब अपनी-अपनी क्षमता और गहराई के मुताबिक़ ही उसके पानी से फ़ायदा उठाते हैं। ज़मीन के मुख़्तलिफ़ टुकड़े भी अपनी सक़त के मुताबिक़ ही फ़सल देते हैं।

बारिश सब पर यकसाँ बरसती है। मगर एक छोटे-से गड्ढे के हिस्से में इतना ज़्यादा पानी नहीं आता, जितना एक लम्बे-चौड़े तालाब के हिस्से में आता है। इसी तरह जब पानी किसी चट्टान या बंजर ज़मीन पर गिरता है तो उसके ऊपर ही से बह जाता है और उसको कोई फ़ायदा नहीं पहुँचाता, लेकिन ज़मीन उपजाऊ हो तो लहलहा उठती है। यही हाल इनसानों की फ़ितरत और उनके नसीब का है।

रमज़ानुल मुबारक के उन ख़ज़ानों में से आपको क्या कुछ मिलेगा? ज़मीन की तरह आपके दिल नर्म और आँखें नम होंगी। आप ईमान का बीज अपने अन्दर डालेंगे और अपनी सलाहियत व क़ाबिलियत की हिफ़ाज़त करेंगे तो बीज पौधा बनेगा और पौधा पेड़। पेड़ नेक आमाल के फल-फूल और पत्तियों से लहलहा उठेंगे और आप हमेशा रहनेवाली बादशाहत की फ़सल काटेंगे। किसान की तरह आप मेहनत और अमल करेंगे तो जन्नत के इनामों की फ़सल तैयार होगी और जितनी ही मेहनत करेंगे, उतनी ही अच्छी फ़सल होगी। दिल पत्थर की तरह कठोर होंगे और आप ग़ाफ़िल किसान की तरह सोते पड़े रह जाएँगे तो रोज़ों और तरावीह और रहमत और बरकत का सारा पानी बह जाएगा और आपके हाथ कुछ भी न आएगा।

अल्लाह की तौफ़ीक़ के बग़ैर यक़ीनन कुछ नहीं मिलता, लेकिन यह तौफ़ीक़ भी उसी को मिलती है जो कोशिश और मेहनत करता है। देखिए अल्लाह तआला क्या कहता है—

> आप उसकी तरफ़ एक बालिश्त (बित्ता) चलेंगे तो वह आपकी तरफ़ दो बालिश्त बढ़ेगा, आप उसकी तरफ़ चलना शुरू करेंगे तो वह आपकी तरफ़ दौड़ता हुआ आएगा। (हदीस : मुस्लिम)

लेकिन आप खड़े रहें पीठ फेरकर ग़ाफ़िल और लापरवाह, तो बताइए कि अल्लाह की तौफ़ीक़ आपके पास कैसे आएगी?

तो ऐसा न कीजिए कि रमज़ान का पूरा महीना गुज़र जाए, रहमतों और बरकतों के डोल के डोल उंडेले जाते रहें और आप इतने बदनसीब हों कि आपकी झोली ख़ाली रह जाए। कुछ करने के लिए और अपने हिस्से की रहमतें लूटने के लिए कमर कस लीजिए और नबी करीम (सल्ल०) की इस तंबीह (चेतावनी) को अच्छी तरह याद रखिए—

> "कितने रोज़ेदार हैं जिनको अपने रोज़ों से भूख-प्यास के सिवा कुछ नहीं मिलता और कितने रातों को नमाज़ पढ़नेवाले हैं जिनको अपनी नमाज़ों

से रात की जगाई के सिवा कुछ हासिल नहीं होता।" (हदीस : अद्दारमी)

सारा दारोमदार आप पर है! नबी करीम (सल्ल०) रमज़ान से पहले अपने साथियों को मुख़ातिब करके इस महीने की अज़मत (महत्ता) और बरकत भी बयान करते और इसकी बरकतों के ख़ज़ानों से अपना भरपूर हिस्सा लेने के लिए पूरी मेहनत और कोशिश की ताकीद भी फ़रमाते। आज़ नबी करीम (सल्ल०) की सुन्नत की पैरवी में मेरा मक़सद भी यही है। यानी यह बताऊँ कि रमज़ान के महीनों में जो बरकत व अज़मत है उसका राज़ क्या है, इससे पूरा-पूरा फ़ायदा उठाने के लिए किस एहतिमाम और तैयारी की ज़रूरत है, किन कामों को नज़र के सामने रखना और उनपर ध्यान केन्द्रित करना ज़रूरी है, वे कौन से तरीक़े हैं जिनपर चलने से मंज़िल हाथ आ सकती है और कौन-सा रवैया है जिसको अपना लेने पर राह खोटी हो जाती है?

बरकत व अज़मत का राज़

सबसे पहले यह जानना ज़रूरी है कि रमज़ान के महीने में जो अज़मत और बरकत है उसका राज़ किस चीज़ में छिपा है। इसलिए कि जाने बग़ैर उसके ख़ज़ानों से अपना दामन भरना मुमकिन नहीं और न ही उस यकसूई, मज़बूत इरादे और मेहनत का एहतिमाम मुमकिन है जो इस मक़सद के लिए लाज़िम है। उस अज़मत व बरकत का सारा राज़ सिर्फ़ एक चीज़ में छिपा है, वह यह कि इस महीने में क़ुरआन मजीद नाज़िल किया गया। यानी नाज़िल होना शुरू हुआ। पूरा का पूरा लौह महफ़ूज़ से उतारकर जिबरील (अलै०) के सुपुर्द किया गया, या नाज़िल करने का फ़ैसला जारी कर दिया गया।

यानी इस माह में रहमान और रहीम (अति करुणामय और दयावान) पालनहार की बेपनाह रहमत ने हम जैसे इनसानों की रहनुमाई का सामान फ़रमाया। उसकी अपार हिकमत ने हमारे सोच और अमल की सही राहें रौशन कीं। सही और ग़लत को परखने के लिए वह कसौटी दी जो ग़लती, टेढ़ और परिवर्तन व तब्दीली से पाक है। यह उस वक़्त हुआ जब रमज़ान की एक सुबह, सेहर के वक़्त, अल्लाह के कलाम (ईशवाणी) की पहली किरण ने प्यारे रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के मुबारक दिल को मुनव्वर कर दिया। यानी बात यह नहीं है कि रमज़ान का महीना इसलिए मुबारक हुआ कि इसमें रोज़े रखे जाते हैं और क़ुरआन की तिलावत का एहतिमाम होता है। नहीं, बल्कि बात यूँ है कि रोज़ों और क़ुरआन की तिलावत के लिए इस माह का चुनाव इसलिए हुआ कि

क़ुरआन के नाज़िल होने की अनुपम, बेजोड़ व बेमिसाल घटना की वजह से यह महीना पहले ही अज़ीम और जलीलुल-क़द्र (गौरवमय और प्रतिष्ठित) हो चुका था। यह अज़ीम और अनुपम घटना इस बात का तक़ाज़ा करती है कि इसके दिनों को रोज़ों के लिए और रातों को क़ियाम (नमाज़) व तिलावत के लिए ख़ास कर दिया जाए। अल्लाह तआला ने इस बात को इस तरह वाज़ेह किया :

> "रमज़ान ही वह महीना है जिसमें क़ुरआन नाज़िल किया गया, जो सारे इनसानों के लिए शुरू से आख़िर तक हिदायत है और ऐसी खुली तालीमात पर मुश्तमिल है जो सीधी राह दिखानेवाली और हक़ और बातिल का फ़र्क़ खोलकर रख देनेवाली हैं। इसी लिए जो शख़्स इस महीने को पाए उसपर ज़रूरी है कि वह इसमें रोज़े रखे।"
>
> (क़ुरआन, 2 : 185)

क़ुरआन की नेमत

क़ुरआन मजीद अल्लाह तआला की नेमतों में से सबसे बड़ी और बेमिसाल नेमत है और उसकी रहमतों में सबसे बड़ी रहमत। उसका नाज़िल होना इनसानी तारीख़ का सबसे बड़ा वाक़िआ है और अल्लाह तआला की बेहिसाब रहमत के जोश व ख़रोश का इस दुनिया में सबसे बड़ा ज़ुहूर है। इसी लिए तो उसने फ़रमाया—

> "वह बेइन्तिहा रहमवाला है, जिसने क़ुरआन की तालीम दी।" (क़ुरआन)
>
> और
>
> "उतारा गया है बेइन्तिहा रहमवाले और बेइन्तिहा रहम करनेवाले की तरफ़ से।" (क़ुरआन)

इनसान के लिए अद्ल व इनसाफ़ की कोई मीज़ान (तुला) है तो यही क़ुरआन है, रौशनी है तो यही है, शिफ़ा का कोई नुस्ख़ा है तो यही है।

वैसे तो हमारे ऊपर अल्लाह तआला की नेमतें बेहद और बेहिसाब हैं। हम हर लम्हा दोनों हाथों से उन नेमतों के ख़ज़ाने लूट रहे हैं। लेकिन दुनिया और दुनिया की हर नेमत बस उस वक़्त तक हमारी है, जिस वक़्त तक साँस आ रही है और जा रही है। आख़िरी साँस निकली तो ज़िन्दगी के सारे लम्हें भी ख़त्म और दुनिया की सारी नेमतें भी हमारे लिए ख़त्म। जो चीज़ ज़िन्दगी के उन ख़त्म हो जानेवाले लम्हों को न ख़त्म होनेवाली ज़िन्दगी में, उन ख़त्म हो जानेवाली नेतमों को हमेशा बाक़ी रहनेवाली नेमतों में बदल सकती है—वह सिर्फ़ और

सिर्फ़ कुरआन की नेमत है। इसी लिए यह दुनिया के सारे ख़ज़ानों से ज़्यादा क़ीमती ख़ज़ाना है। इसी लिए ज़िस रात यह नाज़िल किया गया उसको मुबारक व क़द्रवाली रात यानी 'लैलतुल-क़द्र' कहा और जहाँ-जहाँ उसके उतारे जाने का ज़िक्र किया, अकसर उसका रिश्ता अपनी बार-बार की जानेवाली रहमत, अपनी बेपायाँ हिकमत और अपनी बेपनाह कुव्वत के साथ जोड़ा। फिर इसी लिए रमज़ान के ख़ात्मे पर ईद का जश्न मनाने को कहा कि यह महीना कुरआन के नाज़िल होने की सालगिरह का महीना है।

> "लोगो! तुम्हारे पास तुम्हारे रब की तरफ़ से नसीहत आ गई है। यह वह चीज़ है जो दिलों के मर्ज़ के लिए शिफ़ा है, और जो उसे क़बूल कर ले उसके लिए रहनुमाई और रहमत है। ऐ नबी! कहो कि यह अल्लाह का फ़ज़्ल है और उसकी मेहरबानी है कि ये चीज़ें उसने भेजीं। इसपर लोगों को ख़ुशी मनानी चाहिए। यह उन सब चीज़ों से बेहतर है, जो लोग समेट रहे हैं।" (कुरआन, 10 : 57, 58)

सब दिन और सब महीने एक जैसे होते हैं। ये सब ख़ुदा के पैदा किए हुए हैं और इनके बीच कोई फ़र्क़ नहीं होता। लेकिन कुछ लम्हात ऐसे आते हैं, जिनके साथ सारी इनसानियत और सारी क़ायनात का मुक़द्दर वाबस्ता हो जाता है। ऐसा ही लम्हा था वह, जब ग़ारे हिरा में ख़ुदा की हिदायत की आख़िरी किरण दाख़िल हुई और नबी (सल्ल०) उसके अमीन और हामिल (धारक) बने। इसी अज़ीम लम्हे का अमीन है रमज़ानुल-मुबारक का महीना और यही है रमज़ानुल-मुबारक की अज़मत व बरकत का राज़।

रमज़ान में रोज़ा और तरावीह क्यों?

कुरआन के नाज़िल होने की सालगिरह के महीना में हर दिन को रोज़ा रखने और हर रात को कुछ घड़ियाँ खड़े होकर कुरआन सुनने के लिए क्यों ख़ास किया गया? यह बात समझना कुछ मुशकिल नहीं अगर आप यह जान लें कि कुरआन मजीद की नेमत की हक़ीक़त क्या है और थोड़ा-सा ग़ौर कर लें कि कुरआन मजीद का अमानतदार और धारक होने की ज़िम्मेदारियाँ क्या हैं?

कुरआन एक सबसे बड़ी अमानत और उसका मिशन

नेमत जितनी क़ीमती हो उसका हक़ अदा करने की ज़िम्मेदारी उतनी ही भारी होती है। अल्लाह की किताब और उसका कलाम सबसे बड़ी रहमत और बरकत है, इसलिए यह अपने दामन में ज़िम्मेदारियों की एक पूरी दुनिया रखती है। ये

ज़िम्मेदारियाँ इस हवाले से हैं कि यह किताब ज़िन्दगी के असल मक़सद और ज़िन्दगी को कामयाब और बामुराद बनाने के लिए सही रास्ते की तरफ़ रहनुमाई करती है। यह किताब इनसान के सारे बातनी व ज़ाहिरी और इनफ़रादी (वैयक्तिक) और इज्तिमाई मर्ज़ों के लिए शिफ़ा का नुस्ख़ा है। यह किताब अँधेरों में भटकनेवालों के लिए चिराग़े राह है।

देखिए तो, अल्लाह की हिदायत का यह इनआम दो बड़ी ज़िम्मेदारियाँ अपने साथ लाता है।

एक यह कि उसकी बताई हुई राह पर ख़ुद चलना, उसकी रौशनी में अपनी ज़िन्दगी का सफ़र तय करना, उसके शिफ़ा के नुस्ख़े को अपनी बीमारियों के इलाज के लिए इस्तेमाल करना, अपने दिल को, अपनी सोच को, अपने फ़िक्र व अमल को, सीरत व किरदार को उसके बताए हुए साँचे में ढालने की कोशिश में लग जाना।

दूसरा यह कि जो हिदायत हुदल्लिन्नास है यानी सारे इनसानों के लिए हिदायत है; सिर्फ़ अपने नफ़्स के लिए नहीं—उस हिदायत को सारे इनसानों तक पहुँचाना, उनको इसकी राह पर चलने की दावत देना, अँधेरे रास्तों पर रौशनी करना और बीमारों तक दवा पहुँचाना।

ग़ौर करें तो मालूम होगा कि दूसरी ज़िम्मेदारी पहली ज़िम्मेदारी ही का लाज़मी तक़ाज़ा है और उसका एक ज़रूरी हिस्सा भी। दूसरा काम किए बग़ैर पहला काम कभी पूरा नहीं हो सकता। एक तरफ़ तो यह इल्म और ईमान होना कि क़ुरआन मजीद सारे इनसानों के लिए हिदायत व मार्गदर्शन है, इस बात का तक़ाज़ा करता है कि उसे दूसरों तक पहुँचाया जाए। भटकनेवालों का यह हक़ है कि जो रास्ता जानता हो वह उनको राह बताए और यही हक़ बीमारों का है कि जिसके पास दवा हो वह उन तक दवा पहुँचाए।

दूसरी तरफ़ जब तक दूसरों को क़ुरआन की राह पर चलाने के लिए कोशिश और मेहनत न हो, ख़ुद आपका क़ुरआन व हदीस के दिखाए हुए रास्ते पर चलना भी मुशकिल और अधूरा रहेगा। क्योंकि दावत व जिहाद तो क़ुरआन पर अमल करने का और क़ुरआनी सुलूक का एक ज़रूरी हिस्सा है, बल्कि चोटी का अमल है और आपकी ज़िन्दगी दूसरे इनसानों की ज़िन्दगियों से ताल्लुक़ात व रवाबित में इस तरह गुथी हुई है कि जब तक वे भी इस राह पर न चलें आपका अकेले चलना मुशकिल है, और पूरी तरह चलना और ज़्यादा मुशकिल है।

नबी करीम (सल्ल०) पर पहली वह्य नाज़िल हुई तो वह "इक़रा" यानी "पढ़ो" की हिदायत लाई। पढ़ने में सुनाने का काम शामिल है। दूसरी वह्य ने यह बात बिलकुल खोल दी। एक छोटे-से वक़्फ़े के बाद फ़रमाया गया—"क़ुम फ़-अंज़िर" यानी खड़े हो जाओ और आगाह कर दो। आगे फ़रमाया—"रब्ब-क फ़-कब्बिर" यानी सारे इनसानों के सामने अल्लाह की किब्रियाई (सर्वोच्चता व बड़ाई) का एलान करो और उनके ऊपर उसकी किब्रियाई क़ायम कर दो। वही सबसे बड़ा हो और बाक़ी सब बड़ाइयाँ उसके आगे सिर झुका दें। यहाँ तक कि ज़मीन पर कोई ख़ुदा बनकर राज न करे, कोई ख़ुद को और अपनी मर्ज़ी को अपने जैसे इनसानों पर मुसल्लत न करे और इनसानों की गरदन सिर्फ़ अपने ख़ालिक़ (स्रष्टा) और मालिक के आगे झुके।

आप ग़ौर करेंगे तो पाएँगे कि मुस्लिम उम्मत को वुजूद में सिर्फ़ इसी मक़सद के लिए लाया गया है, अन्यथा यह सब जानते हैं कि जिस वक़्त क़ुरआन मजीद का नाज़िल होना शुरू हुआ, उस वक़्त ख़ुदा के ऐसे बन्दे मौजूद थे जो तौहीद के क़ायल थे, रिसालत व किताब पर ईमान रखते थे, जो इबादतगाहों में रात-रात भर खड़े होकर अल्लाह की बन्दगी करते थे और वे लोग भी मौजूद थे जो रोज़े रखा करते थे। उनके ख़ुदा से ताल्लुक़ और अच्छे अख़लाक़ व व्यवहार की तारीफ़ ख़ुद अल्लाह तआला ने क़ुरआन मजीद में की है। फिर एक नई रिसालत, एक नई दावत और एक नई उम्मत क्यों ज़रूरी हुई? एक तरफ़ तो इसलिए कि ईमान व अमल की राहें इनसानों की सारी गुमराहियों से पाक होकर रौशन हो जाएँ, लेकिन दूसरी तरफ़ इसलिए कि एक ऐसी उम्मत वुजूद में आए जो इनसानों के सामने अपने रब और उसके दीन (जीवन-प्रणाली) व धर्म की गवाह बनकर खड़ी हो, ताकि इनसान इनसाफ़ पर क़ायम हो जाएँ।

"और इसी तरह हमने तुमको दर्मियानी उम्मत बनाया है, ताकि तुम लोगों पर गवाह बनो।" (क़ुरआन, 2 : 143)

यह क़ुरआन का मिशन है। यही वह मिशन है जो क़ुरआन को पाने और क़ुरआन का अमानतदार बनने के नतीजे में मेरा और आपका और क़ुरआन पर ईमान का दावा करनेवाली इस सारी उम्मत का मिशन ठहराता है।

यह ज़िम्मेदारी कितनी भारी और बड़ी ज़िम्मेदारी है इसका तसव्वुर भी मुशकिल है। सारी इनसानियत को सही राह पर लाया जाए, यह एक इंतिहाई अज़ीमुश्शान काम है। इसी लिए हुज़ूर (सल्ल०) पहला पैग़ाम लेकर ग़ारे हिरा से

घर आए तो काँपते और लरज़ते हुए आए। ख़ुद अल्लाह तआला ने इस कलाम की अमानत को "क़ौले सक़ील" यानी भारी बात कहा और कमर तोड़ बोझ क़रार दिया। यह कोई आसान काम नहीं, लेकिन ऐसा मुशकिल भी नहीं कि इसका उठाना इनसान के बस से बाहर हो। वरना, अल्लाह तआला जो रहमान व रहीम और आदिल व हिकमतवाला है, ऐसा बोझ क्यों डालता।

इसलिए इस बोझ को उठाने के लिए अपने अन्दर एक ऐसा इनसान बनाने की ज़रूरत है जो सिर्फ़ अल्लाह तआला का बन्दा हो और अपनी बन्दगी में किसी को शामिल न करे। एक ऐसा इनसान बनने के लिए और ऐसी दुनिया बनाने के लिए—जहाँ हुक्म सिर्फ़ अल्लाह का चले और गर्दनें सिर्फ़ उसके आगे झुकें—क़ुरआन पर ईमान व उसका इल्म और उससे मुसलसल गहरा रब्त भी ज़रूरी है, सब्र और इस्तिक़ामत, और लगातार जिद्दोजुहद और क़ुरबानी भी इंतिहाई ज़रूरी है। क़ुरआन का मिशन बड़े ऊँचे किरदार व गुणों का मुतालिबा करता है। इसका तक़ाज़ा है कि इनसान क़ुरआन का परचम उठाए तो फ़िक्र और किरदार को भी बुलंदियों की तरफ़ उठाए। इसके लिए ख़ुसूसी क़ुव्वत और सलाहियत की ज़रूरत है।

क़ुरआन, तक़वा और रोज़ा

इस क़ुव्वत और सलाहियत का और उन आला सलाहियतों का सरचश्मा है तक़वा, यानी परहेज़गारी व ख़ुदा का डर। अल्लाह तआला ने अपनी किताब के शुरू ही में यह स्पष्ट कर दिया है कि इस किताब से वही सही राह पा सकते हैं, राह पर लग सकते हैं और राह पर चल सकते हैं, जो तक़वा रखते हों—'हुदल्लिल मुत्तक़ीन' यानी हिदायत है तक़वा रखनेवालों के लिए (क़ुरआन 2 : 2) दूसरी ओर रोज़े रखने का मक़सद, या यूँ कहिए कि रोज़ों का हासिल यूँ बयान किया कि 'लअल्लकुम तत्तक़ून'—ताकि तुम्हारे अन्दर तक़वा पैदा हो (क़ुरआन 2 : 183)।

इन दोनों आयतों को मिलाकर पढ़िए! आप फ़ौरन इस राज़ को पा लेंगे कि रोज़े से क़ुरआन मजीद का इतना गहरा ताल्लुक़ क्यों है और क़ुरआन के नाज़िल होने की सालगिरह के महीने को रोज़ों के लिए क्यों ख़ास किया गया? इस महीने की बरकत भरी घड़ियों से ज़्यादा सही वक़्त इस बात के लिए और कौन-सा हो सकता था कि रोज़े के ज़रिए तक़वा की वह सिफ़त (गुण) पैदा करने की कोशिश की जाए, जिससे क़ुरआन की राह आसान हो और क़ुरआन की अमानत का बोझ उठाना मुमकिन हो सके।

तक़वा यानी परहेज़गारी क्या है?

तक़वा बड़ी ऊँची और अनमोल सिफ़त है जो सारी मतलूबा सिफ़ात अपने अन्दर समेटे हुए है। जो तक़वा की सिफ़त रखते हैं उनको अल्लाह तआला ने क़ुरआन मजीद में दुनिया और आख़िरत की सारी भलाइयों की ज़मानत दी है। तक़वा वह चीज़ है, जिससे हर मुशकिल से निकलने का रास्ता मिलता है। तक़वा वह है, जिससे रिज़्क़ के दरवाज़े इस तरह खुलते हैं कि जो हमारे गुमान में भी नहीं होते। तक़वा की वजह से दीन और दुनिया के सारे काम आसान हो जाते हैं। अल्लाह तआला बुराइयाँ झाड़ देता है और बड़े-बड़े इनआमों से नवाज़ता है। तक़वा रखनेवालों ही को उस जन्नत की ख़ुशख़बरी दी गई है जिसके फैलाव में ज़मीन व आसमान समा जाए, उन्हीं से उस मग़फ़िरत व माफ़ी का वादा किया गया है जो उस जन्नत की तरफ़ ले जानेवाली है। जन्नत तो उनकी विरासत है ही, दुनिया में भी आसमान व ज़मीन से बरकतों के दहाने खोल देने का वादा उनसे किया गया है जो ईमान व तक़वा की सिफ़त से आरास्ता और सुसज्जित हों।

> "अगर बस्तियों के लोग ईमान लाते और तक़वा का रवैया अपनाते, तो हम उनपर आसमान और ज़मीन से बरकतों के दरवाज़े खोल देते।"
>
> (क़ुरआन, 7 : 96)

तक़वा क्या है? बात समेटकर कही जाए तो कहना चाहिए कि तक़वा दिल व रूह, शऊर व इल्म, अज़्म (संकल्प) व इरादा, ज़ब्त व नज़्म और अमल व किरदार की उस क़ुव्वत और सामर्थ्य का नाम है जिसके बल पर हम उस चीज़ से रुक जाएँ जिसको हम ग़लत जानते और मानते हों और अपने लिए नुक़सानदेह समझते हों और उस चीज़ पर जम जाएँ जिसको सही जानते और मानते हों। तक़वा का शाब्दिक अर्थ 'बचना' है। इस अर्थ में यह तक़वा का बिलकुल बुनियादी और इब्तिदाई मफ़हूम (भाव) है जो मैंने आपके सामने पेश किया है।

यह क़ुव्वत व ताक़त हमारी फ़ितरत में समाई हुई है कि हम नुक़सान व तकलीफ़ से बचें, नफ़े की ख़्वाहिश करें और उसको हासिल करने की कोशिश करें। हमारे अन्दर उसकी तलब और क़ुव्वत न हो तो इनसान की ज़िन्दगी की बक़ा व पायदारी बिलकुल नामुमकिन है। वह न तरक़्क़ी कर सकता है, न विकास। हम जलती आग में हाथ नहीं डालते, बल्कि हमारा हाथ ख़ुद-ब-ख़ुद

आग के पास से खिंचकर वापस लौट आता है। हमारा बच्चा ग़लती से आग के क़रीब भी चला जाए तो हम बेचैन होकर लपकते हैं कि किसी तरह उसको बचा लें।—क्यों? इसलिए कि हमें इस बात पर यक़ीन है कि आग में हमारा हाथ जल जाएगा; आग बच्चे को जला देगी, वह मर सकता है। यह दुनिया की आग का तक़वा (डर) है। इस आग का नुक़सान हमारे तजुर्बे में है, यह हमारी निगाहों के सामने है, इसी लिए इससे बचने की सलाहियत इतनी ताक़तवर है।

एक आग और है।—यह आग ईमान व अमल और फ़िक्र व अख़लाक़ की ख़राबियों से भड़कती है। किन राहों पर चलने से इस दुनिया और आनेवाली दुनिया में अल्लाह तआला की उस आग में गिरना और जलना पड़ेगा, यही बात क़ुरआन मजीद बताता है। वह ख़बरदार करता है कि उन राहों के क़रीब न जाओ, उस आग से बचो। हक़ का इनकार, नाफ़रमानी, ज़ुल्म, झूठ, हराम माल, दूसरों का हक़ मारना, उनको तकलीफ़ पहुँचाना—ये सब आग हैं।

हमारी आँखें इस तरह की आग को नहीं देख सकतीं, उनका हमें कोई तजुर्बा नहीं। उस आग में हाथ डालकर हम जलने का मज़ा फ़ौरन और अभी नहीं चखते। जबकि दुनिया की आग से हम इसलिए हर हाल में बचते हैं कि उसे हम देखते हैं, उसमें जलने का मज़ा हम फ़ौरन और अभी चखते हैं और उसके नुक़सान पर हमें पूरा-पूरा यक़ीन है। अगर ऐसा ही यक़ीन हमें इस बात पर हो जाए कि झूठ बोलने से ज़बान आग में जल रही है, हराम खाने से पेट आग के अंगारों से भर रहा है, या हराम रास्ते पर चलने से आग ओढ़ना-बिछौना और खाना-पीना बन रही है तो फिर यक़ीनन हमारे दिलों और जिस्म व जान में वह क़ुव्वत और काबिलियत पैदा हो जाएगी जो हमें उन कामों से रोकने में कामयाब होगी।

यह अल्लाह का और उसकी आग का तक़वा (डर) है। इस तक़वा का पहला सरचश्मा ग़ैब (परोक्ष) पर ईमान है। क़ुरआन में कहा गया है—

अल्लज़ीन युअमिनू-न बिल ग़ैबि

अर्थात् वे जो ग़ैब पर ईमान रखते हैं। (क़ुरआन, 2 : 3)

आज की ईमान की ख़राबी और बदअमली ही कल की आग है। अरगचे, उसे हम आज देख नहीं सकते। इस बात पर यक़ीन ही से तक़वा पैदा होता है। इसी यक़ीन से वह क़ुव्वत पैदा होती है जो क़ुरआन के रास्ते पर चलने के लिए सबसे बढ़कर दरकार है, वह ज़ादेराह (पाथेय) हासिल होता है जो सबसे ज़्यादा

ज़रूरी है।

तक़वा की यह हक़ीक़त सामने रखकर ग़ौर कीजिए, आप फ़ौरन यह समझ लेंगे कि तक़वा के लिए सबसे पहली बात यह ज़रूरी है कि हम उसूलों और अख़लाक़ व अमल में सही और ग़लत, हक़ और बातिल (सत्य-असत्य) का एक मुस्तक़िल ज़ाबिता और मेयार तस्लीम करें और उसकी पाबंदी करें। जो लोग कहें कि अक़ीदों और अख़लाक़ में सही और ग़लत का कोई मुस्तक़िल वुजूद और ज़ाबिता व मेयार नहीं, ये बढ़ाई हुई चीज़ें हैं, जो ज़माना और हालात के लिहाज़ से बदलती रहती हैं, जो कल सही था, आज ग़लत हो सकता है और जो आज ग़लत है, वह कल सही हो सकता है, या आदमी ईमानदार हो या बेईमान, कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता, उनके लिए तक़वा का सवाल ही पैदा नहीं होता।

हमने अल्लाह तआला को अपना रब (पालनहार) माना है। इसका अर्थ ही यह हुआ कि हक़ और सही सिर्फ़ वह है, जो उसका हुक्म है, जिससे उसकी ख़ुशी हासिल होती है, जिसका इल्म उसने दिया है। हर वह चीज़ जो उसको नाराज़ करनेवाली हो, जिससे उसका ग़ज़ब भड़कता हो, जिससे उसकी नाफ़रमानी होती हो—वह सब ग़लत और बातिल है, वह नुक़सान पहुँचानेवाली और हानिकारक है और उससे बचना ज़रूरी है।

अल्लाह तआला को रब मानने का मतलब यह भी है कि कुछ हक़ीक़तें ऐसी हैं जो हम देख नहीं सकते, चख नहीं सकते, जो हमारी चेतना (हवास) की पकड़ से बाहर हैं, जो शरीर व जान से परे हैं, जो भूख-प्यास से ऊपर हैं, जो ख़्वाहिशों की फ़ौरी तकमील से ज़्यादा मज़ेदार और क़ीमती हैं।

इसके मानी ये भी हैं कि सही और ग़लत का इल्म सिर्फ़ वही दे सकता है और उन हक़ीक़तों का इल्म भी सिर्फ़ उसी से हासिल हो सकता है, जिसके पास ग़ैब और ज़ाहिर दोनों का इल्म है और जिसकी मर्ज़ी ही सही और ग़लत की कसौटी है।

मुत्तक़ी (तक़वावाले) वे बन सकते हैं, जो ग़ैबी (परोक्ष) चीज़ों पर ईमान लाएँ। जो इन बातों को मान ले उसके लिए एक ही रास्ता है—वह यह कि वह अपने तन, मन, धन सबको पूरा का पूरा अपने रब यानी पालनहार अल्लाह के हवाले कर दे। उसका उठना-बैठना, चलना-फिरना, सोचना-बोलना सभी अल्लाह तआला के हुक्म के मुताबिक़ हो और उसकी बन्दगी के लिए वक़्फ़ हो जाए। जो कुछ उसने दिया है—चाहे माल हो या वक़्त, ज़ाहिरी नेमत हो या आत्मिक— उसकी राह में लगा दे और उसी के लिए ख़र्च करे। पूरी ज़िन्दगी इस फ़िक्र में गुज़ारे

कि कल उससे मुलाक़ात करना है और उस वक़्त की कामयाबी ही असल कामयाबी है।

यही है वह तक़वा जो अल्लाह तआला ने क़ुरआन मजीद के आरंभ ही में बयान कर दिया है—ग़ैब पर ईमान, नमाज़ की शक्ल में जिस्म व जान से उसकी बन्दगी, उसका दिया हुआ उसी की राह में ख़र्च करना, हक़ व बातिल की कसौटी के लिए वह्य पर ईमान और आख़िरत पर यक़ीन।

जो अल्लाह को अपना रब कहे और उसके बाद भी अपने जिस्म व जान की क़ुव्वतों को, अपने वक़्त और माल को उन राहों में लगाए जो उसको नापसन्द हैं और उन चीज़ों से न बचे जो उसके ग़ज़ब (क्रोध) की आग भड़कानेवाली हैं—वह तक़वा से महरूम है। तक़वा सिर्फ़ ज़ाहिरी रस्मों को अपनाने का नाम नहीं है। यह अपने अन्दर की क़ुव्वत और यक़ीन का नाम है। इसी लिए नबी करीम (सल्ल०) ने एक बार अपने मुबारक क़ल्ब (दिल) की तरफ़ इशारा करके फ़रमाया—"तक़वा तो यहाँ है।" (हदीस : मुस्लिम)

तक़वा और रोज़ा का ताल्लुक़

तक़वा के ये मानी अगर आप ज़ेहन में रखें तो यह बात समझने में कुछ परेशानी नहीं होगी कि तक़वा पैदा करने के लिए रोज़ा, ख़ुदा के सामने इबादत के लिए रात में जागना और क़ुरआन की तिलावत से ज़्यादा असरदार कोई और नुस्ख़ा नहीं हो सकता था। इस नुस्ख़े के इस्तेमाल के लिए रमज़ान का मुबारक महीना ही सबसे ज़्यादा मुनासिब महीना था। रोज़ा और क़ियामे लैल (यानी रात को नमाज़ में खड़ा रहने) में क़ुरआन की तिलावत दोनों को रमज़ान के महीने में जमा करके अल्लाह तआला ने अस्ल में तक़वा को हासिल करने का रास्ता हमारे लिए खोल दिया है।

हम रोज़ा रखते हैं तो सुबह से शाम तक अपने शरीर की जाइज़ माँगों—भूख-प्यास तक से अल्लाह की ख़ुशी के लिए अपने आपको रोके रखते हैं और उससे अज्र व इनआम पाने की ख़ातिर अपनी जाइज़ ख़्वाहिशों को भी क़ुरबान कर देते हैं। रात आती है तो खड़े होकर उसका कलाम सुनते हैं। धीरे-धीरे महीने भर में कम से कम एक बार पूरी किताब ज़रूर सुन लेते हैं। लेकिन बदक़िस्मती की बात यह है कि ज़बान न जानने और मेहनत न करने की वजह से हममें से बहुतों के कुछ पल्ले नहीं पड़ता कि अल्लाह तआला ने उनसे क्या कहा और उन्होंने क्या सुना। लेकिन ख़ुदा की मंशा बिलकुल वाज़ेह है कि इस महीने

में मुसलमान एक बार उस पूरी हिदायत से वाक़िफ़ हो जाएँ, जो उसने क़ुरआन मजीद की सूरत में उन्हें दी है और जिसपर मुसलमानों को ख़ुद अमल करना ज़रूरी है और दूसरों को उसकी तरफ़ बुलाना उनका सबसे पहला फ़र्ज़ है। क़ुरआन को समझकर तिलावत करने से इल्म व ईमान हासिल होता है और रोज़ा से अमल करने की ताक़त हासिल होती है।

रोज़ा में, जब अल्लाह तआला का हुक्म होता है हम खाते हैं और जब उसका हुक्म होता है हम रुक जाते हैं। न खाना हराम है न पीना; लेकिन रोज़े में हम इन सभी बुनियादी ज़रूरतों को भी, अपने रब के हुक्म की इताअत में, अपने ऊपर हराम कर लेते हैं। जबकि दूसरे औक़ात में उनका पूरा करना न सिर्फ़ जाइज़, बल्कि फ़र्ज़ होता है। इस तरह हम यह क़ुव्वत पैदा करते हैं कि हर उस चीज़ से रुक जाएँ, जिससे अल्लाह तआला ने रोका है—चाहे इसके लिए हमारी ज़रूरत और इच्छा कितनी ही शदीद (तीव्र) हो और वे हमें कितनी ही सही और जाइज़ नज़र आएँ।

रोज़ा से हमारा यह यक़ीन भी मज़बूत होता है कि जिन हक़ीक़तों की ख़बर अल्लाह तआला और उसके रसूल ने दी है, जो माद्दी और महसूस कर सकने की क़ुव्वत से परे हैं, वे भूख-प्यास और जिंस (Sex) जैसी माद्दी हक़ीक़तों से कहीं ज़्यादा बुलंद, क़ीमती और लज़ीज़ हैं। हम सिर्फ़ रोटी से नहीं जीते, बल्कि सबसे बुलंद अख़लाक़ व किरदार के बल पर जीते हैं, जो ज़िन्दगी के लिए बहुत ज़रूरी है। इस तरह से हमारे अन्दर यह ताक़त पैदा होती है कि हम सबसे बुलंद रूहानी और अख़लाक़ी मक़सद के लिए जो बाद में हासिल होनेवाले हों, उन दुनियवी ख़्वाहिशों को क़ुरबान कर दें, जिनका मज़ा आज ही और अभी फ़ौरन लूटा जा सकता हो।

रोज़ा यह बात भी इनसान के अन्दर पक्का करता है कि असल चीज़ अल्लाह की इताअत है और सिर्फ़ अल्लाह ही का हुक्म किसी चीज़ के सही या ग़लत होने के लिए आख़िरी सनद है। नेकी और सवाब खाने में नहीं है और न भूखा रहने में, न जागने में और न सोने में है, बल्कि नेकी और सवाब सिर्फ़ अल्लाह तआला की इताअत और फ़रमाँबरदारी में है। रात में खड़े होकर नमाज़ पढ़ने से भी इसी क़िस्म की क़ुव्वतें हासिल होती हैं।

जब ये क़ुव्वतें और कैफ़ियतें पैदा हो जाएँ उसी वक़्त हम इनफ़िरादी तौर पर भी और इजतिमाई तौर पर भी क़ुरआन की अमानत का बोझ उठाने के क़ाबिल हो सकते हैं। क्योंकि तभी हमारे अन्दर अपने मक़ासिद और क़ुरआन के मिशन

की तकमील को माद्दी और महसूस चीज़ों की ख़्वाहिशों और जल्द मिलनेवाली और ज़ाहिरी यक़ीनी लज़्ज़तों की तलब पर तरजीह देने की सलाहियत पैदा हो सकती है। इसी क़ुव्वत व सलाहियत का नाम तक़वा है।

एक और पहलू से देखिए—रोज़ा की कोई ज़ाहिरी शक्ल-सूरत नहीं है। नफ़्स और पेट की गहराई में उठनेवाली भूख, प्यास और जिंसी ख़्वाहिशों को कोई दूसरा देख नहीं सकता, न महसूस कर सकता है, न कोई किसी के एहसास में शामिल हो सकता है—उन ख़्वाहिशों को क़ुरबान कर देने की भी कोई ज़ाहिरी शक्ल नहीं। लिहाज़ा इन ख़्वाहिशात के तर्क करने को किसी माद्दी (भौतिकीय) पैमानों से नहीं नापा-तौला जा सकता। रोज़ा तो ख़ालिस रब के सामने होने के यक़ीन पर ही क़ायम होता है और उसी को मज़बूत करता है। उसकी यही रूह है—अल्लाह तआला हर वक़्त साथ है, जहाँ भी हों वह मौजूद है। दो हों तो तीसरा वह है और अकेले हों तो दूसरा वह है। वह शहेरग (प्राणस्नायु) से भी ज़्यादा क़रीब है। यह है वह ईमान, हर वक़्त अपने रब के सामने होने पर ईमान, जो रोज़ा का असल फल है। इसी लिए हदीस में फ़रमाया गया है कि रोज़ा सिर्फ़ मेरे लिए है, सिर्फ़ मैं ही इसका बदला दे सकता हूँ। (बुख़ारी, मुस्लिम)। तक़वा इसी ईमान की बुनियाद पर क़ायम होता है, इसी ईमान से ख़ुराक हासिल करता है, इसी पर मज़बूत होता है और इसी से फलता-फूलता है।

अब आख़िर में आपको एक अहम बात और बताऊँ ! जब शैतान इस बात से मायूस हो जाता है कि हम इस नुस्ख़े को छोड़ने पर राज़ी हो जाएँ, जो इतने बेपनाह फ़ायदे अपने अंदर समाए हुए है तो फिर वह इसकी कोशिश करता है कि उसके लाभ को महदूद कर दे और हम समुद्र से कुछ बूँदें हासिल करने ही पर इतमीनान कर लें। रोज़ों और रात को इबादत करने से वह तक़वा भी हासिल हो सकता है, जो आपने देखा। इससे ऐसा तक़वा भी पैदा हो सकता है, जो सिर्फ़ इस बात पर हमें मुतमइन कर दे कि कुछ छोटी नेकियाँ कर लें। मुस्तहबात (वे काम जो करना अनिवार्य न हों, लेकिन कर लें तो कोई हरज भी न हो) की फ़िक्र नफ़्लों से बढ़कर करें, नफ़्लों की सुन्नतों से बढ़कर और इन सबकी फ़िक्र फ़र्ज़ों से बढ़कर। इसी तरह हम सिर्फ़ छोटी बुराइयों से रुक जाएँ।

लेकिन अल्लाह तआला ने रमज़ान मुबारक में रोज़े फ़र्ज़ करके जो तक़वा पैदा करने की तालीम दी है वह इससे बहुत अज़ीम चीज़ है। यह वह तक़वा है, जिससे हम एक व्यक्ति की हैसियत से और एक जमाअत की हैसियत से रमज़ान में नाज़िल होनेवाले क़ुरआन मजीद के मिशन को पूरा करने और उसका हक़

अदा करने के क़ाबिल बन सकते हैं। यह बात इसलिए जानना ज़रूरी है कि ऐसा होता रहा है और हो रहा है कि रोज़े रखनेवाले और रातों को जागनेवाले रोज़े रखते रहते हैं और रातों को जागते रहते हैं, मगर एक क़दम भी उस राह पर नहीं उठाते जिस राह पर रमज़ान के रोज़े और तिलावते कुरआन (कुरआन का पाठ) उन्हें चलाना चाहते हैं। हालाँकि नेक कामों में सबसे अहम अमल, फ़र्ज़ों में सबसे बड़ा फ़र्ज़ और फ़ायदे के लिहाज़ से सबसे ज़्यादा ख़ैरवाला अमल तो यही है कि हम कुरआन का हक़ अदा करने के लिए और अल्लाह के दूसरे बन्दों को कुरआन की बताई हुई राह पर लगाने के लिए, अपने आपको तैयार करें और अमलन कुछ न कुछ ज़रूर करें।

इस फ़र्ज़ को पूरा करने की फ़िक्र हम उसी वक़्त कर सकते हैं, जब हम कुरआन मजीद, रमज़ान के रोज़ों और तक़वा के आपसी ताल्लुक़ को अच्छी तरह समझ लें। मेरी अब तक की गुफ़्तगू का मक़सद यही था। हमें अच्छी तरह याद रखना चाहिए कि रमज़ान का महीना रोज़ों के लिए सिर्फ़ इस वजह से फ़र्ज़ किया गया कि इस महीना में अल्लाह तआला का कलाम नाज़िल हुआ। इस महीने की सारी बरकत और अज़मत इसलिए है कि इस महीने में उसने अपने बन्दों की हिदायत का इरादा फ़रमाया और अपने अज़ीम फ़ज़्ल से अपनी हिदायत का आख़िरी पैग़ाम अपने नबी के ज़रीए दुनियावालों के हवाले किया। इस महीने में रोज़े फ़र्ज़ करने का मक़सद यह है कि हम अपने अन्दर वह तक़वा पैदा करें जिससे हमें अल्लाह तआला की इस हिदायत देनेवाली किताब का हक़ अदा करने की कुव्वत और सलाहियत हासिल हो।

(2)

आप क्या करें?

आप क्या करें जिससे रमज़ानुल-मुबारक से ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा हासिल कर सकें। उसके रोज़ों से, उसकी तरावीह से, उसकी तिलावते कुरआन से, उसकी इबादतों व मामूलात से, उसकी रातों से और उसके दिनों से—तक़्वा की क़ुव्वत और सलाहियत हासिल कर सकें। अब मैं आपके इसी सवाल का जवाब देने की कोशिश करूँगा।

1. नीयत और इरादा

पहली चीज़ सही नीयत और पक्का इरादा है।

नीयत शुऊर और एहसास पैदा करती है और उसमें हरकत पैदा करती है। शुऊर बेदार हो तो इरादा पैदा होता है और इरादा, मेहनत और कोशिश की सूरत में ज़ाहिर होता है।

किसी काम के लिए मक़सद का सही शुऊर और उसको हासिल करने के लिए पक्के इरादे की हैसियत वही है जो जिस्म के लिए रूह की होती है। इन्हीं अर्थों में नमाज़, रोज़ा और इबादत के लिए नीयत की ताकीद की गई है। कुछ उलमा के नज़दीक ज़बान से नीयत के अल्फ़ाज़ कहे बग़ैर अमल सही नहीं होता, कुछ के नज़दीक दिल का इरादा और फ़ैसला काफ़ी है। लेकिन सिर्फ़ नीयत के अल्फ़ाज़ दोहराने से या दिल में किसी अमल के करने की नीयत कर लेने से फ़िक़ही और क़ानूनी शर्त तो ज़रूर पूरी हो जाती है, लेकिन यह नीयत अमल की रूह का काम उसी सूरत में कर सकती है, जब यह दिल व दिमाग़ में अमल का मक़सद उजागर कर दे और दिल में उस मक़सद को हासिल करने के लिए पक्का इरादा (दृढ़-संकल्प) पैदा कर दे।

ज़िन्दा और मुर्दा जिस्म में ज़ाहिरी तौर पर कोई फ़र्क़ नहीं होता। लेकिन ज़िन्दा जिस्म हरकत और अमल की क़ुव्वत रखता है, जबकि मुर्दा जिस्म हरकत और अमल की क़ुव्वत से महरूम होता है। यही हाल आमाल का है। अगर आमाल में सही नीयत की रूह हो तो वे असर दिखाने, पलने-बढ़ने और नतीजा देने की क़ुव्वत रखते हैं। इसी बात को नबी करीम (सल्ल०) ने इस तरह फ़रमाया

कि आमाल के सही और बावज़न होने का दारोमदार नीयत पर होता है—"आमाल का दारोमदार नीयत पर है।" (हदीस : बुख़ारी)। हर इनसान के लिए हासिल वही है जिसकी वह नीयत करे।

नीयत होनी चाहिए, सही होनी चाहिए, लेकिन ख़ालिस भी होनी चाहिए। यानी हर काम सिर्फ़ अल्लाह तआला की रिज़ा हासिल करने के लिए और उसके अज्र व इनआम हासिल करने के लिए करना चाहिए। अगर आपकी नीयत ख़ालिस न होगी और आप काम सिर्फ़ अल्लाह तआला के लिए न करेंगे, तो वह क़बूल न होगा और आपकी मेहनत का अज्र अकारथ किया जा सकता है।

नीयत—अमल के लिए तलब और आरज़ू का इज़हार भी है। तलब और आरज़ू मौजूद न हो तो नीयत उसको पैदा करती है। तलब व आरज़ू हो, तो नीयत मज़बूत इरादा और हौसला पैदा करती है। नीयत, मज़बूत इरादा और हौसला ही वह ताक़त हैं जो हमें हरकत में लाती हैं और हरकत में रखती हैं। ये वे बुनियादी सिफ़ात (गुण) हैं, जिनके बग़ैर कोई रास्ता तय नहीं हो सकता और जिनके बग़ैर रमज़ानुल-मुबारक का सफ़र भी आपको अपनी मंज़िल तक नहीं पहुँचा सकता।

रमज़ानुल-मुबारक के इस्तिक़बाल के लिए सबसे पहला काम आपको यही करना चाहिए कि आप रमज़ान के मक़ाम, उसके पैग़ाम, उसके मक़सद और उसकी अज़मत व बरकत के एहसास को अपने अन्दर ताज़ा करें। इस बात की नीयत करें कि इस महीने में आप जिन मामूलात और इबादतों का एहतिमाम करेंगे उनसे आप अपने अन्दर वह तक़वा पैदा करने की कोशिश करेंगे जो रोज़ा का हासिल है और आपको अल्लाह तआला के दीन के तक़ाज़ों और क़ुरआन मजीद के मिशन को पूरा करने के क़ाबिल बना सके। इसके साथ इस बात का पक्का इरादा करें कि इस महीने में जिन कामों को करना अल्लाह तआला ने फ़र्ज़ किया है और वे काम जिनकी ताकीद नबी करीम (सल्ल०) ने फ़रमाई है, और वे काम व मामूलात भी जो आप ख़ुद अपने लिए तय करेंगे ताकि इस महीने से भरपूर फ़ायदा उठा सकें—इन सबको आप मेहनत और पाबंदी के साथ पूरा करने की पूरी कोशिश करेंगे।

इस मक़सद के लिए बहुत फ़ायदेमंद होगा यदि आप रमज़ानुल-मुबारक के आग़ाज़ से पहले आख़री दिन में या आग़ाज़ होने के फ़ौरन बाद पहली ही रात में कुछ देर तन्हा बैठ जाएँ। अल्लाह तआला के सामने ख़ुद को हाज़िर जानें, उसकी हम्द (गुणगान) करें, उसके नबी (सल्ल०) पर दुरूद भेजें, अपने गुनाहों से तौबा व

इस्तिग़फ़ार करें। इसके बाद आनेवाले महीने के बारे में वे तमाम बातें सोचें जिनका यहाँ ज़िक्र किया गया है (या इसी किताब को पढ़ लें)। इसके बाद पूरे माह के लिए कोशिश और मेहनत की नीयत और पक्का इरादा करें। अल्लाह तआला से तौफ़ीक़ और मदद तलब करें और दुआ करें कि वह आपका हाथ पकड़कर आपको अपनी राह पर चलाए।

2. क़ुरआन मजीद से ताल्लुक़

दूसरी चीज़, क़ुरआन मजीद की तिलावत, उसका सुनना और उसका इल्म और समझ हासिल करने का एहतिमाम है।

रमज़ानुल-मुबारक का महीना अपनी ख़ास इबादतों यानी रोज़े और क़यामे लैल (रात में इबादत करने) को किसी न किसी सूरत में क़ुरआन मजीद पर केन्द्रित कर देता है। इस महीने का असल हासिल ही क़ुरआन सुनना और पढ़ना, क़ुरआन सीखना और उसपर अमल की सलाहियत पैदा करना है। इसलिए आपको सबसे ज़्यादा एहतिमाम जिस चीज़ का करना चाहिए वह यह है कि आप ज़्यादा से ज़्यादा वक़्त क़ुरआन मजीद को पढ़ने, पढ़ाने और उससे फ़ायदा उठाने में बसर करें। यह वक़्त इस तरह गुज़ारें कि एक तरफ़ आपको यह मालूम हो कि अल्लाह तआला ने आपसे क्या कहा है, दूसरी तरफ़ आपका दिल और आपकी सोच क़ुरआन को अपने अन्दर समा ले और आपके अन्दर उसके मुताबिक़ अमल करने का शौक़ पैदा हो जाए।

तरावीह की नमाज़ की पाबंदी करने से कम से कम इतना ज़रूर हासिल होता है कि आप पूरा क़ुरआन एक बार सुन लेते हैं। अल्लाह के सामने खड़े होकर अल्लाह का कलाम सुनने का अन्दरूनी व रूहानी फ़ायदा अपनी जगह पर बहुत क़ीमती है, लेकिन अरबी न जानने की वजह से आप इस इबादत से यह फ़ायदा नहीं हासिल कर पाते कि आप क़ुरआन के पैग़ाम और मज़ामीन (विषय-वस्तु) से वाक़िफ़ हो जाएँ और उनको ताज़ा कर लें। इसलिए ज़रूरी है कि आप इस मक़सद के लिए कुछ ज़्यादा मेहनत करें। जितना वक़्त आप तरावीह में लगाते हैं, उससे कहीं ज़्यादा वक़्त आप रोज़ाना क़ुरआन का कुछ हिस्सा तर्जुमे के साथ समझकर पढ़ने में लगाएँ।

कितना हिस्सा रोज़ाना पढ़ें? उसकी मिक़दार का एक तअय्युन तो तरावीह की सूरत में किया गया है। यानी इतना पढ़ना चाहिए कि रमज़ान के महीने में क़ुरआन मजीद का एक दौरा पूरा हो जाए। हदीसों से मालूम होता है कि इस

महीने में जिबरील (अलै०) ख़ुद आकर नबी करीम (सल्ल०) को क़ुरआन मजीद का एक दौरा पूरा करवाया करते थे (बुख़ारी, मुस्लिम)। चुनाँचे सबसे बेहतर तो यह है कि जहाँ रोज़ एक पारा तरावीह में सुना जाए, वहीं आप उसी दिन एक पारा तर्जुमे के साथ पढ़ लें। किन्तु यह काम सबके लिए करना मुशकिल होगा।

क़ुरआन मजीद ने ख़ुद उन लोगों को जो कमज़ोर हैं इस मामले में सहूलत दी है—चाहे वह कमज़ोरी बीमारी की वजह से हो या रोज़ी-रोटी की तलाश की वजह से या दीन के दूसरे कामों में लगे होने की वजह से—और फ़रमाया है कि जितना आसानी से पढ़ सको, उतना पढ़ो (73 : 20)। इसलिए दूसरी सूरत यह हो सकती है कि आनेवाले रमज़ान की पहली तारीख़ से आप इस इरादे के साथ क़ुरआन तर्जुमा के साथ पढ़ने का काम शुरू कर दें कि जब अगला रमज़ान आएगा, तो उस वक़्त तक आप एक बार पूरा क़ुरआन मजीद पढ़ चुके होंगे। इस मक़सद के लिए रोज़ाना एक या डेढ़ रुकू से ज़्यादा पढ़ने की ज़रूरत न होगी। इतना वक़्त निकालना, न रमज़ान में कोई मुशकिल है, न रमज़ान के बाद।

अगर आप पाबन्दी से इतना करना भी मुशकिल समझें तो आप इस रमज़ान से कम से कम तीन आयतें रोज़ाना तर्जुमे के साथ पढ़ना शुरू कर दें। इस तरह साल में न सही पाँच-छः साल में आप एक बार पूरा क़ुरआन ख़त्म कर लेंगे। इस काम की शुरुआत इसी रमज़ान से करने से अल्लाह तआला की बरकत आपके साथ रहेगी।

समझकर पढ़ने के साथ यह भी ज़रूरी है कि आप क़ुरआन मजीद को अपने अन्दर समोते चलें और उसके साथ अपने दिल और रूह के ताल्लुक़ को गहरा करें और परवान चढ़ाएँ। क़ुरआन मजीद ने ख़ुद अपने पढ़ने और सुननेवालों की जो सिफ़ात बयान की हैं वे सिर्फ़ ज़ेहन से समझकर पढ़ने तक महदूद नहीं—इस तरह से तो बहुत-से ग़ैर मुस्लिम भी पढ़ते हैं—बल्कि रूह, दिल और जिस्म की पूरी शिरकत के साथ पढ़ने पर हावी हैं। क़ुरआन का अपना बयान है कि जब उसकी आयतें तिलावत की जाती हैं तो सुनने और पढ़नेवालों के दिल काँप उठते हैं और नर्म पड़ जाते हैं, उनके जिस्म के रोंगटे खड़े हो जाते हैं, उनकी आँखों से आँसू बहने लगते हैं, उनपर गिरिया व ज़ारी तारी हो जाता है और उनका ईमान बढ़ता है। प्यारे नबी (सल्ल०) ने भी फ़रमाया है कि जब क़ुरआन मजीद पढ़ो तो रोओ और अगर रोना न आए तो रोने की कोशिश करो, इसलिए कि क़ुरआन हिज़्न (वेदना) के साथ नाज़िल किया गया है।

चाहे आप थोड़ा ही हिस्सा पढ़ें—सूरा अलक़ारिआ पढ़ें, जो खड़खड़ा

देनेवाली आफ़त की ख़बर दे रही है या अज़-ज़िलज़ाल पढ़ें, जो यह ख़बर देती है कि आपकी छोटी से छोटी बुराई और छोटी से छोटी नेकी आपके सामने आ जाएगी—लेकिन उसमें डूबकर पढ़ें और इस कैफ़ियत के साथ पढ़ें कि आप अल्लाह के सामने हाज़िर हैं, वह आपसे बात कर रहा है, बता रहा है कि क्या करो और क्या न करो, क्या पेश आनेवाला है और क्या कुछ मिल सकता है। आपका दिल व दिमाग़ और जिस्म सब तिलावत के इस काम में शरीक हों।

3. अल्लाह तआला की नाफ़रमानी से बचना

तीसरी चीज़, अल्लाह तआला की नाफ़रमानी से बचने की ख़ास कोशिश है।

रोज़ा का मक़सद तक़्वा पैदा करना है और रमज़ानुल-मुबारक का महीना तक़्वा के परवान चढ़ने का ख़ास मौसम है। इसलिए इस महीने में अल्लाह तआला की नाफ़रमानी से बचने की ख़ुसूसी कोशिश करनी ज़रूरी है। इसका मतलब यह नहीं है कि रमज़ान के अलावा दूसरे दिनों और रातों में अल्लाह तआला की नाफ़रमानी से बचने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। मतलब यह है कि रमज़ान में क़ुरआन मजीद से ख़ुसूसी ताल्लुक़, सिर्फ़ अल्लाह तआला के हुक्म की तामील में दिन भर भूखा-प्यासा रहने और उसके बाद रातों को खड़े होकर नमाज़ पढ़ने और उसका कलाम सुनने से एक ख़ास माहौल बनता है और एक ख़ास कैफ़ियत पैदा होती है। इस माहौल और कैफ़ियत में यह जज़्बा ज़्यादा गहरा और ताक़तवर हो सकता है कि आप हर उस चीज़ से बचें जो अल्लाह तआला को नाराज़ करनेवाली है।

वैसे तो यह कोशिश ज़िन्दगी के हर मामले में करनी चाहिए, लेकिन दूसरे इनसानों के साथ ताल्लुक़ात और समाजी मामलों में ख़ास तवज्जोह देने की ज़रूरत है। वह आदमी बड़ा ही बदक़िस्मत होगा जो बड़े एहतिमाम के साथ रोज़े रखे, नमाज़ें पढ़े, सदक़ा करे, क़ुरआन पढ़े और फिर क़ियामत के दिन अल्लाह के सामने इस हाल में आए कि गर्दन पर लोगों की तरफ़ से दावों का एक अंबार हो—किसी को मारा, किसी को गाली दी, किसी की बेइज़्ज़ती की, किसी का दिल दुखाया, किसी का माल नाहक़ खाया—प्यारे नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया है कि मेरी उम्मत में असल मुफ़लिस (निर्धन) ऐसा ही शख़्स है। उसकी तमाम नेकियाँ, दावेदारों को दे दी जाएँगी फिर भी दावे ख़त्म न हुए तो दावेदारों के गुनाह उसके सिर डाले जाएँगे और उसको सिर के बल जहन्नम में फेंक दिया जाएगा। (हदीस : मुस्लिम)

आप क़ुरआन मजीद में उस संदर्भ को देखें जिसमें रोज़े फ़र्ज़ किए गए हैं। आप फ़ौरन समझ लेंगे कि यही वह बुनियादी मक़सद है जो रोज़ा से हासिल होना चाहिए।

क़ुरआन पहले तो इनसानी जान के एहतिराम और क़िसास (ख़ून के बदले) का हुक्म देता है, फिर मीरास में इनसाफ़ के साथ वसीयत करने का। इसके बाद रोज़ा और रमज़ान का बयान होता है। इसके फ़ौरन बाद हिदायत दी जाती है कि एक-दूसरे का माल झूठ और नाहक़ तरीक़ों से मत खाओ। फिर यह उसूल बयान किया गया है कि वफ़ादारी और नेकी ज़ाहिरी रस्मों की पाबंदी का नाम नहीं है। असल मतलूब (अभीष्ट) तो तक़वा है—जो ईमान, मुहब्बत, इन्फ़ाक़ और सब्र जैसी चीज़ों का नाम है। इसके बाद अल्लाह की राह में लड़ने का हुक्म दिया गया, किन्तु ताकीद की गई कि अल्लाह तआला ज़्यादती करनेवालों को नापसंद करता है, इसलिए जंग में भी ज़ुल्म-ज़्यादती न करो।

अहकाम और आदेशों की इस लड़ी में रोज़ा को जिस जगह जड़ा गया है, उससे यह बात साफ़ हो जाती है कि रोज़े रखने के बाद यह ज़रूरी है कि आप किसी दूसरे इनसान की जान, माल, हुक़ूक़ और इज़्ज़त पर हाथ न डालें। इस बात को नबी (सल्ल०) ने यूँ बयान किया है कि रोज़ा गुनाहों से बचने के लिए एक ढाल का काम करता है, तो इसको ढाल बनाओ। रोज़ेदार न बदकलामी करे, न चीख़े-चिल्लाए और अगर कोई उसको बुरा कहे या उससे लड़े तो यह कहकर अलग हो जाए कि मैं रोज़े से हूँ। मेरे लिए यह मुमकिन नहीं कि इन बुरे कामों में मशग़ूल हो जाऊँ। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

एक और हदीस में नबी करीम (सल्ल०) ने साफ़ तौर से फ़रमाया कि रोज़े का अस्ल मक़सद—खाना-पीना छोड़ना नहीं, बल्कि झूठ बोलना और झूठ पर अमल करना छोड़ देना है। (हदीस : बुख़ारी)

अच्छी तरह जान लीजिए कि रोज़ा सिर्फ़ पेट का रोज़ा नहीं है बल्कि आँख का भी रोज़ा है, कान का भी रोज़ा है, ज़बान का भी रोज़ा है, हाथ-पाँव का भी रोज़ा है। वह रोज़ा यह है कि आँख वह न देखे, कान वह न सुने, ज़बान वह न बोले, हाथ-पाँव वे काम न करें—जो अल्लाह तआला को नापसंद हैं और जिनसे उसने मना किया है।

एक-एक करके अपनी ख़राबियों पर क़ाबू पाने से बहुत काम हो सकता है। मसलन आनेवाले रमज़ान के लिए आप फ़ैसला कर लें कि आप किसी से चीख़-चिल्लाकर बात न करेंगे, न लड़ेंगे और किसी के बारे में तकलीफ़देह बात

न कहेंगे चाहे वह सामने हो या पीठ पीछे, सिवा इसके कि वह भली बात हो। नाफ़रमानियों से बचने का आग़ाज ज़बान की हिफ़ाज़त से करें। यह मुशकिल ज़रूर है, लेकिन इसकी पाबंदी से तमाम काम सुधरने और अपनी नेकियाँ तबाह होने से बचाने के बहुत बड़े फ़ायदे हासिल होते हैं। रोज़ रात को इन दो बातों का इहतिसाब (हिसाब-किताब) भी कर लें और ग़लतियाँ हुई हों तो फ़ौरन इस्तिग़फ़ार करें, अल्लाह से माफ़ी माँगे और आइन्दा उससे बचने का पक्का इरादा करें।

4. नेकी की कोशिश

चौथी चीज़ हर प्रकार की नेकियों की ख़ुसूसी कोशिश है।

हर लम्हा, हर क़िस्म की नेकी की चाह और तलब तो मोमिन की फ़ितरत होनी चाहिए। किन्तु रमज़ान के महीने में इस मामले में भी ख़ुसूसी तवज्जोह और कोशिश ज़रूरी है। इसलिए कि यह वह महीना है जिसमें आप जिस नेकी से भी ख़ुदा के क़रीब होने की काशिश करें, उसका सवाब फ़र्ज़ के बराबर हो जाता है। (हदीस : बैहक़ी)

इससे बड़ी ख़ुशख़बरी और क्या हो सकती है!

यह चाहत और कोशिश इबादत के दायरे में भी करें, मसलन जमाअत से नमाज़ों में तकबीरे तहरीमा को अपने लिए लाज़िम कर लेना, नफ़्ल नमाज़ों का एहतिमाम करना। यह जुस्तजू और कोशिश इनसानी ताल्लुक़ात के दायरे में भी होनी चाहिए। अपने भाई से मुस्कराकर मिलना भी सदक़ा है, उसको तकलीफ़ न पहुँचाना भी सदक़ा है, उसके डोल (बर्तन) में पानी डाल देना भी सदक़ा है। लोग फ़र्ज़ और नफ़्ल लफ़्ज़ को सुनकर इसका मतलब फ़ौरन सिर्फ़ नमाज़ समझते हैं, लेकिन ज़िन्दगी के हर दायरे में फ़र्ज़ और नफ़्लों का सामना होता है।

जब बन्दा फ़र्ज़ों को अदा करने के साथ-साथ नफ़्लों का भी एहतिमाम करता है, तो ज़ाहिर है कि अपने शौक़ और ख़्वाहिश से करता है। इसलिए कि नफ़्लों का एहतिमाम न करने पर उसकी कोई पकड़ नहीं है। जब बन्दा अपने शौक़ से दौड़-धूप करके अपने आक़ा (मालिक) की ख़ुशनूदी हासिल करने के लिए काम करता है और कोशिश करता है कि कोई मौक़ा हाथ से जाने न पाए तो फिर उसके बारे में वह हदीसे क़ुदसी सादिक़ (चरितार्थ) आती है, जिसमें अल्लाह तआला ने फ़रमाया है कि मैं उससे मुहब्बत करने लगता हूँ, मैं उसका कान बन जाता हूँ जिससे वह सुनता है, उसकी आँख बन जाता हूँ जिससे वह देखता है

और उसका पाँव बन जाता हूँ जिससे वह चलता है। (हदीस : बुख़ारी)

इस सिलसिले में आप कोई तीन नेकियाँ ख़ास तौर पर चुन लें और उनकी पाबंदी रमज़ान के मुबारक महीने में ज़रूर करें। मसलन—यह कि आप नमाज़ जमाअत से पढ़ेंगे, किसी इनसान को तकलीफ़ न पहुँचाएँगे, हर व्यक्ति से मुस्कराकर मिलेंगे।

5. क़ियामे लैल यानी रात को जागकर नमाज़ पढ़ना

पाँचवीं चीज़ क़ियाम लैल है।

रात का क़ियाम और क़ुरआन की तिलावत, अपना एहतिसाब और इस्तिग़फ़ार, तक़्वा को हासिल करने के लिए बहुत ज़रूरी और इंतिहाई कारगर नुस्ख़ा है। यह तक़्वा की सिफ़त और अलामत है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया है कि तक़्वावाले (परहेज़गार) वे हैं, जो रात को कम सोते हैं और सहर के वक़्त इस्तिग़फ़ार करते हैं। (क़ुरआन, 51 : 18)

रमज़ान मुबारक में 'तरावीह' की नमाज़ क़ियामे लैल ही के लिए है। आप शुरू रात में खड़े होकर क़ुरआन सुनते हैं—यह क़ियामे लैल है। क़ियामे लैल का दूसरा वक़्त वह है जो आधी रात के बाद या रात के आख़िरी तिहाई हिस्से में है। यह वक़्त 'सहरी' का वक़्त है। यही वह वक़्त है जिसमें इस्तिग़फ़ार की ताकीद क़ुरआन ने की है।

रमज़ान के महीने में थोड़ा-सा एहतिमाम करके रात के उस आख़िरी हिस्से में आप क़ियामे लैल की बरकत हासिल कर सकते हैं और आपका शुमार "मुस्तग़फ़िरीन बिल अस्हार" यानी रात की आख़िरी घड़ियों में इस्तिग़फ़ार करनेवालों—में हो सकता है। इसका तरीक़ा बड़ा आसान है। सहरी के लिए तो आप उठते ही हैं, पन्द्रह-बीस मिनट पहले उठकर वुज़ू करके दो रक्अत नमाज़ पढ़ लें।

यह रात का वह हिस्सा है जिसके बारे में नबी करीम (सल्ल०) ने बताया है कि अल्लाह तआला दुनियावालों के बहुत क़रीब आता है और पुकारता है—

"कौन है जो मुझसे माँगे कि मैं उसे जो माँगे वह दूँ, कौन है जो मुझसे अपने गुनाहों की मग़फ़िरत (क्षमा-याचना) चाहे कि मैं उसको माफ़ कर दूँ।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

एक रिवायत में तो दिल को तड़पा देनेवाले ये अल्फ़ाज़ हैं—

"रात की उस घड़ी में अल्लाह तआला अपना हाथ फैला देता है और

कहता है कि कौन है जो ऐसी ज़ात को क़र्ज़ दे जो न फ़क़ीर है, न ज़ालिम और सुबह तक यही कहता रहता है।" (हदीस : मुस्लिम)

जब अल्लाह तआला ने अपनी रहमत का हाथ इस तरह फैला रखा हो और आप खाने-पीने के लिए बिस्तर से उठ ही रहे हों तो इससे ज़्यादा आसान ख़ुशनसीबी की राह और क्या हो सकती है कि आप कुछ मिनट ज़्यादा लगाकर अपने गुनाह बख़्शवा लें और जो माँगें वह पा लें।

अगर दो रक्अत नमाज़ पढ़नी भी मुशकिल हो, तो कम से कम अपनी पेशानी अपने रब के आगे ज़मीन पर रखकर उसके सामने गिड़गिड़ाएँ, रोएँ-धोएँ, अपने गुनाहों पर इस्तिग़फ़ार करें, ख़ैर व बरकत तलब करें और राहे हक़ पर जमे रहने की आरज़ू करें। पाँच-दस मिनट में आसानी से यह हो सकता है। एक बार यदि आपने सुबह के इस वक़्त की लज़्ज़त पा ली तो आप ज़्यादा वक़्त भी लगाएँगे और रमज़ान के बाद भी इस लज़्ज़त के पीछे जाएँगे।

6. ज़िक्र व दुआ

छठी चीज़ ज़िक्र और दुआ का एहतिमाम है।

ज़िक्र और दुआ का एहतिमाम पूरी ज़िन्दगी में हर वक़्त ज़रूरी है। ज़िक्र क्या है? हर वह काम जो अल्लाह तआला को महबूब है, ज़िक्र है। चाहे वह दिल से हो या ज़बान से हो, या हाथ-पाँव या शरीर के किसी अंग से हो। रोज़ा भी इन मानों में ज़िक्र है, भूख-प्यास भी ज़िक्र है और क़ुरआन की तिलावत—ख़ासकर नमाज़ में—तो है ही ज़िक्र की बड़ी आला और ऊँची शक्ल। लेकिन रमज़ानुल-मुबारक में ज़बान से ज़िक्र, यानी ज़िक्र के कलिमों का विर्द और दुआ का एहतिमाम बहुत ज़रूरी और फ़ायदेमंद है। यह नफ़्ल है मगर सवाब फ़र्ज़ का पाता है। इससे ग़फ़लत दूर होती है और तवज्जोह रमज़ान की ख़ैर व बरकत हासिल करने पर केन्द्रित रखने में आसानी होती है।

रमज़ानुल मुबारक में—अल्हम्दु लिल्लाह, सुब्हानल्लाह, ला इला-ह इल्लल्लाह, अल्लाहु अकबर, सुब्हानल्लाहि व बि-हमदिही, सुब्हानल्लाहिल अज़ीम, ला हौ-ल व ला क़ुव्व-त इल्ला बिल्लाहि, अस्तग़फ़िरुल्लाह व अतूबु इलैह—जैसे कलिमों को अधिकता से पढ़िए, ताकि ज़बान अल्लाह की याद से तर रहे।

ज़िक्र की एक शक्ल दुआ है। दुआ की बुनियाद यह ईमान है कि सब कुछ अल्लाह तआला से ही मिल सकता है और सारे इख़्तियारात और ख़ज़ानों का मालिक सिर्फ़ वही है। दुआ अपने सरापा मुहताज और फ़क़ीर होने का इक़रार

है। हम अपने को सिर्फ़ अल्लाह का मुहताज और फ़क़ीर समझें—यही इबादत की रूह है। क्योंकि रमज़ानुल-मुबारक का हर लम्हा अज़ीम और ख़ैर व बरकतवाला है। इसलिए बार-बार अपने आक़ा के आगे हाथ फैलाना चाहिए। रमज़ान में आम औक़ात के अलावा क़बूलियत के ख़ास औक़ात भी हैं। उनमें इफ़तार का वक़्त भी है। उस वक़्त अल्लाह तआला की रहमत मुतवज्जो होती है।

इसी सिलसिले में कोशिश करें कि पहले अशरा (दस दिनों) में रहमत की तलब अधिकता से करें, दूसरे अशरा में मग़फ़िरत की और तीसरे अशरा में जहन्नम की आग से रिहाई की। प्यारे नबी (सल्ल०) ने इन अशरों की यह बरकतें बयान फ़रमाई हैं। (हदीस : बैहक़ी)

कुछ ज़िक्रों और दुआओं को याद करके अपने ज़िक्र का निसाब बना लें और उसकी पाबंदी करें। मुख़्तलिफ़ औक़ात और हालात की दुआओं और जामेअ मसनून दुआओं में से भी हर रमज़ान में कुछ दुआएँ याद कर लिया करें।

7. शबे क़द्र और एतिकाफ़

सातवीं चीज़ शबे क़द्र का एहतिमाम है।

यह वह मुबारक रात है, जिसमें कुरआन मजीद नाज़िल हुआ। यह रात अपनी क़द्र व क़ीमत के लिहाज़ से, उस काम के लिहाज़ से जो इस रात में अंजाम पाया, उन ख़ज़ानों के लिहाज़ से जो इस रात में तक़सीम किए जाते हैं और हासिल किए जा सकते हैं—हज़ारों महीनों और हज़ारों सालों से बेहतर है। जो इस रात क़ियाम करे उसको सारे गुनाहों की मग़फ़िरत की ख़ुशख़बरी दी गई है। हर रात की तरह इस रात में भी वह घड़ी है, जिसमें दुआएँ क़बूल कर ली जाती हैं और दीन व दुनिया की जो भलाई माँगी जाए वह अता की जाती है (हदीस : मुस्लिम)। अगर आप इस रात के ख़ैर से महरूम रहें तो इससे बड़ी बदक़िस्मती और कोई नहीं हो सकती। (हदीस : इब्ने माजा)

यह रात कौन-सी रात है? यह हमें यक़ीनी तौर पर नहीं बताया गया है। हदीसों से मालूम होता है कि यह आख़िरी अशरा की कोई ताक़ (विषम) रात है। यानी इक्कीसवीं, तेईसवीं, पच्चीसवीं, सत्ताईसवीं या उनतीसवीं। कुछ हदीसों में कहा गया है कि यह आख़िरी अशरा की कोई एक रात या रमज़ानुल-मुबारक की कोई भी रात है।

आम तौर पर यह समझा जाता है कि यह सत्ताईसवीं रात है और अगर इस

रात क़ियाम और इबादत का एहतिमाम कर लिया जाए तो काफ़ी है। यह ज़रूर है कि कुछ सहाबा (रज़ि०) और आलिमों की रिवायत से सत्ताईसवीं रात की ताईद होती है। लेकिन मेरे ख़याल में, इस रात के बारे में खोलकर न बताएं जाने में एक गहरी हिकमत छुपी हुई है; अगर यह समझ लिया जाए कि हमें यह रात मालूम है और यह सत्ताईसवीं रात है तो यह हिकमत ख़त्म हो जाती है।

इसको छिपाए रखने का राज़ यह है कि आप उसकी जुस्तजू व तलाश में सरगर्दां रहें, मेहनत करें, अपने शौक़ की आग को जलता रखें। आख़िरी अशरा की हर ताक़ (विषम) रात में उसे तलाश करें, इससे ज़्यादा हिम्मत हो तो इस अशरा की हर रात में और उससे भी ज़्यादा हिम्मत हो तो रमज़ान की हर रात में। जो चीज़ अल्लाह तआला को सबसे ज़्यादा महबूब और प्यारी है वह यह कि बंदा उसको ख़ुश करने के लिए और उसकी रहमत और नेमत की तलब और शौक़ में; हर वक़्त पूरी तल्लीनता के साथ तलाश में लगा रहे और लगातार कोशिश करता रहे। काम से ज़्यादा 'इरादा और लगातार कोशिश' है जो अल्लाह तआला को पसंद है। अगर मालूम हो कि यह रात कौन-सी है तो कोशिश और जिद्दोजुहद की जो कैफ़ियत मतलूब है वह हाथ न आएगी।

इस रात में इबादत करने से वह सारी ख़ैर व बरकत तो हासिल होगी ही जो किसी भी रात में इबादत करने से हासिल होती है, लेकिन एक तरफ़ तो इस आम ख़ैर व बरकत में कई गुना इज़ाफ़ा होता है, दूसरी तरफ़ और बढ़ाकर ख़ैर व बरकत के दरवाज़े भी खोल दिए जाते हैं। पूरा रमज़ानुल-मुबारक हमारी उम्मत पर अल्लाह तआला की उस ख़ास रहमत का मज़हर (प्रदर्शन) है कि उसने हमारे लिए कम वक़्त और कम अमल में वह सवाब और अज्र रखा है जो दूसरी उम्मतों को एक लम्बी मुद्दत और ढेरों अमल से हासिल होता था। प्यारे नबी (सल्ल०) के फ़रमान के मुताबिक़ इसकी मिसाल ऐसी है कि मुस्लिम उम्मत को अस्र से मग़रिब तक मेहनत करके उससे कहीं ज़्यादा मज़दूरी मिलती है, जितनी यहूदियों को फ़ज्र से ज़ुहर तक और ईसाइयों को ज़ुहर से मग़रिब तक काम करके मिली। (हदीस : बुख़ारी) शबे क़द्र हमारे रब की इस ख़ुसूसी रहमत का सबसे बड़ा सबूत है।

चुनाँचे आप कमर कस लीजिए और हिम्मत से काम लीजिए! कोशिश कीजिए कि कम से कम आख़िरी अशरा की हर ताक़ रात अल्लाह के सामने नमाज़, तिलावत व ज़िक्र और दुआ व इस्तिग़फ़ार में गुज़ारें। पूरी रात मुमकिन न हो तो आधी रात के बाद सहरी तक दो-तीन घंटे गुज़ारें। हाथ बाँधकर खड़े हों,

सजदे में पेशानी ज़मीन पर टेक दें, रोएँ और गिड़गिड़ाएँ, अपने गुनाहों से इस्तिग़फ़ार और तौबा करें।

दुआओं के क़बूल होने की ख़ास घड़ी तो हर रात को आती है, किन्तु शबे क़द्र में इस घड़ी का रंग ही कुछ और होता है, उसकी शान और तासीर ही अलग होती है। वह घड़ी न मालूम कौन-सी हो, इसी लिए प्यारे नबी (सल्ल०) ने हज़रत आइशा (रज़ि०) को एक मुख़्तसर मगर जामेअ दुआ सिखाई थी, जो इस रात में आप भी ज़्यादा से ज़्यादा माँगे—

"अल्लाहुम-म इन्न-क अफ़ुवुन तुहिब्बुल् अफ़-व फ-अ्-फु अन्नी"

"मेरे अल्लाह, तू बहुत माफ़ करेनवाला है, माफ़ करने को महबूब रखता है। तो मुझे माफ़ कर दे।" (हदीस : अहमद, तिर्मिज़ी)

अगर हिम्मत व हौसला हो तो फिर आप आख़िरी अशरा में एतिकाफ़ भी ज़रूर करें। दस दिन का मुमकिन न हो तो, कम मुद्दत का सही। एतिकाफ़ क़ल्ब व रूह, मिज़ाज व अंदाज़ और फ़िक्र व अमल को अल्लाह के रंग में रंगने और रब्बानियत के साँचे में ढालने के लिए रसायन की हैसियत रखता है। इस तरह शबे क़द्र की जुस्तजू और तलाश का काम भी आसान हो जाता है। एतिकाफ़ हर व्यक्ति के लिए तो मुमकिन नहीं, लेकिन इसकी अहमियत इससे ज़ाहिर है कि इसको फ़र्ज़े किफ़ाया[1] ठहराया गया है। प्यारे नबी (सल्ल०) ने हमेशा एतिकाफ़ किया है और इसकी बड़ी ताकीद फ़रमाई है। हज़रत आइशा (रज़ि०) बताती हैं—

"जब रमज़ान का आख़िरी अशरा आता तो अल्लाह के रसूल (सल्ल०) अपनी कमर कस लेते, रातों को जागते, अपने घरवालों को जगाते और इतनी मेहनत करते जितनी किसी और अशरा में न करते।"

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

एतिकाफ़ की असल रूह यह है कि आप कुछ मुद्दत के लिए दुनिया के हर काम, मशग़ले और दिलचस्पी से कटकर अपने आपको सिर्फ़ अल्लाह के लिए समर्पित कर दें। बाल-बच्चों और घरबार को छोड़कर अल्लाह के घर मस्जिद में गोशागीर हो जाएँ और सारा वक़्त उसकी याद में गुज़ारें। एतिकाफ़ का हासिल यह है कि पूरी ज़िन्दगी ऐसे साँचे में ढल जाए कि अल्लाह को और उसकी बन्दगी को हर चीज़ पर तरजीह और फ़ौक़ियत (प्राथमिकता) हो।

---

1. वह फ़र्ज़ जो कुछ लोगों के अदा करने से सबकी ओर से अदा हो जाए।

यह तो मुमकिन नहीं कि आपमें से हर शख़्स दस दिन का एतिकाफ़ करे, लेकिन एक काम आप आसानी से कर सकते हैं। जिससे आप अपनी ताक़त के मुताबिक़ एतिकाफ़ करके ज़्यादा से ज़्यादा सवाब हासिल कर सकते हैं, वह यह है कि आप जब भी मस्जिद में जाएँ तो एतिकाफ़ की नीयत कर लें कि जो वक़्त भी मैं यहाँ गुज़ारूँगा वह मैंने अल्लाह के लिए फ़ारिग़ कर दिया है।

8. अल्लाह की राह में ख़र्च करना

आठवीं चीज़ अल्लाह की राह में खुले दिल और फ़ैयाज़ी से ख़र्च करना है।

नमाज़ के बाद सबसे बड़ी इबादत अल्लाह की राह में ख़र्च करना है। जो कुछ अल्लाह तआला ने दिया है वह सब ख़र्च करना—वक़्त भी और जिस्म व जान की क़ुव्वतें भी। लेकिन सबसे बढ़कर माल ख़र्च करना, इसलिए कि माल दुनिया में सबसे बढ़कर महबूब और पसन्दीदा होता है और दुनिया की मुहब्बत ही सारी कमज़ोरियों की जड़ है।

प्यारे नबी (सल्ल०) सारे इनसानों से ज़्यादा फ़ैयाज़ और सखी (उदार) थे, लेकिन जब रमज़ानुल-मुबारक आता और हुज़ूर (सल्ल०) की मुलाक़ात जिबरील (अलै०) से होती, तो फिर आपकी सख़ावत और दानशीलता की कोई इंतिहा न रहती। आप अपनी फ़ैयाज़ी में बारिश लानेवाली हवा की तरह हो जाया करते थे। क़ैदियों को रिहा करते और हर माँगनेवाले को देते। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

अल्लाह तआला ने एक-एक दाने और एक-एक पैसे पर—जो अल्लाह की राह में ख़र्च किया जाए—कम से कम सात सौ गुना बदले व अज्र का वादा किया है और यह भी कहा है कि जिसको वे चाहेंगे इससे बहुत ज़्यादा भी अता करेंगे। यह वादा उसके कलाम में है, जिसकी सच्चाई में ज़र्रा बराबर शक नहीं किया जा सकता। सरमायाकारी (पूँजी निवेश) के लिए इतने बेपनाह मुनाफ़े का वादा करनेवाला कारोबार और कहाँ पाया जा सकता है! और इस सरमायाकारी के लिए रमज़ान से अच्छा मौक़ा और कौन-सा हो सकता है, जब फ़र्ज़ वैसे ही सत्तर गुना बढ़ जाता है और नफ़्ल फ़र्ज़ के बराबर सवाब हासिल करता है।

अल्लाह की राह में ख़र्च करना तक़वावालों (परहेज़गारों) की ख़ास सिफ़त (गुण) और तक़वा की बुनियादी शर्त है। यह तक़वा पैदा करने के लिए बेलाग ज़रिया भी है। रमज़ान में अल्लाह की राह में ख़र्च करना यानी इनफ़ाक़ रोज़ा के साथ मिलकर अपने तक़वा हासिल करने की कोशिश को कई गुना ज़्यादा कारगर और फलदायक बना देता है।

बहरहाल आप रमज़ान में अपनी मुट्ठी खोल दें। अल्लाह के दीन को क़ायम करने व तबलीग़ के लिए, रिश्तेदारों के लिए, यतीमों और मुहताजों के लिए जितना माल भी अल्लाह की राह में निकाल सकें, निकालें। भूख और प्यास बर्दाश्त करते हैं तो कुछ तंगी और सख़्ती जेब के मामले में भी बर्दाश्त कीजिए। लेकिन जो कुछ दीजिए सिर्फ़ अल्लाह के लिए दीजिए। किसी से बदला और शुक्रिया की ख़्वाहिश आपके दिल में न हो। क़ुरआन फ़रमाता है—

"हम तुमसे न बदला चाहते हैं, न शुक्रिया।" (76 : 9)

इससे क्या फ़ायदा कि आप माल निकालें, पूँजी लगाएँ और अपने ही हाथों पूँजी और फ़ायदा दोनों को अकारथ कर दें।

ज़कात भी पूरा हिसाब करके इसी माह में निकालें। इस तरह बाक़ायदगी भी आ जाएगी और सवाब भी आपको सत्तर गुना मिलेगा।

9. इनसान की मदद और ख़िदमत

नौवीं चीज़ इनसान की मदद और ख़िदमत है।

रमज़ान के महीने को प्यारे नबी (सल्ल०) ने बराबरी का महीना कहा है। यह अपने जैसे इनसानों, अपने भाइयों और बहनों के साथ हमदर्दी और ग़मख़्वारी का महीना है। ख़ास तौर पर यह आजीविका और रोज़ी के दायरे में एक-दूसरे की तंगियों और महरूमियों, परेशानियों और दुखों में शिरकत और मदद व ख़िदमत का महीना है। आपकी अपनी भूख-प्यास जहाँ आपमें तक़वा, नफ़्स पर क़ाबू, अल्लाह के हुक्म की इताअत और सब्र की सिफ़ात पैदा करने का ज़रिया बन सकती है, वहीं यह आपको दूसरे इनसानों पर भूख-प्यास और दुख-दर्द में जो कुछ बीतती है, उसका कुछ स्वाद चखाती है। ज़ाती तजुर्बा और एहसास से आपके अन्दर हमदर्दी और मदद का बड़ा मज़बूत और जानदार जज़्बा पैदा हो सकता है।

नेकी व भलाई और तक़वा का यह दायरा बहुत फैला हुआ है। उसकी शाखें बेशुमार हैं। खाना खिलाना, मरीज़ों का इलाज और इयादत (पूछताछ), यतीमों और बेवाओं की ख़ैर-ख़बर लेना, मुहताजों और फ़क़ीरों की ज़रूरतें पूरी करना, रिश्ते-नातों को जोड़ना वग़ैरह, ये सब उसी फैले हुए दयारे के चंद गोशे हैं। इस ख़िदमत के मुस्तहिक़ सब हैं—आपके घरवाले और क़रीबी रिश्तेदार, आपके दीनी भाई और दोस्त भी, आपके पड़ोसी भी और आम मुसलमान भी व आम इनसान भी।

हमदर्दी के इस फैले हुए काम की तरफ़ लगातार तवज्जोह पैदा करने और क़ायम रखने के लिए, प्यारे नबी (सल्ल०) ने रोज़ेदार को इफ़तार कराने की बड़ी तरग़ीब (प्रेरणा) दी है। फ़रमाया है—

"जो शख़्स इस महीने में किसी रोज़ेदार को 'इफ़तार' कराए तो उसके लिए गुनाहों की बख़्शिश और दोज़ख़ की आग से रिहाई है। उसको उतना ही सवाब मिलेगा जितना रोज़ेदार को, और उससे रोज़ेदार के सवाब में कोई कमी नहीं आएगी।"

सहाबा (रज़ि०) ने कहा—

"ऐ अल्लाह के रसूल! हम सबके पास इतना तो सामान नहीं होता कि रोज़ेदार को इफ़तार कराएँ?" आपने फ़रमाया, "अल्लाह तआला यह सवाब उसको भी देता है, जो एक घूँट दूध, एक खजूर या पानी के एक घूँट से किसी रोज़ेदार को इफ़तार कराए। (फिर फ़रमाया) जो किसी रोज़ेदार को पेट भरकर खाना खिलाए तो अल्लाह तआला उसको मेरे हौज़ से ऐसा सैराब करेगा कि फिर उसे कभी प्यास न लगेगी यहाँ तक कि वह जन्नत में दाख़िल हो जाए।" (हदीस : बैहक़ी)

इसलिए इस महीने में ख़ास एहतिमाम कीजिए कि आप अपने भाई-बहनों के काम आएँ, भूखों को खाना खिलाएँ, ज़रूरतमंदों की ज़रूरतें पूरी करें, माँगनेवाले और निर्धनों को अपने माल में से उनका हक़ दें। इस बात को याद रखिए कि गुनाहों की मग़फ़िरत, जहन्नम से रिहाई, हौज़े कौसर से सैराबी, जन्नत में दाख़िला जैसी इंतिहाई अज़ीम नेमतें व इनआम अल्लाह के बन्दों की ख़िदमत से मिलते हैं। उनको तकलीफ़ पहुँचाने से नमाज़, रोज़ा व सदक़ात के बड़े-बड़े ढेर अकारथ हो जाते हैं। ख़िदमत छोटी हो या बड़ी, इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। जो आपके पास हो और दे सकते हों वह दे दें, जो आप कर सकते हों वह कर दें। किसी छोटी से छोटी चीज़ को हक़ीर और कम न जानिए। एक वक़्त का खाना ही हो, एक गिलास पानी ही हो, एक रुपया ही हो, एक अच्छी बात ही हो, एक सिफ़ारिश ही हो, एक प्यासे कुत्ते की प्यास बुझाना ही हो—ये सभी काम आपको जन्नत में पहुँचा सकते हैं।

10. क़ुरआन की तरफ़ दावत

दसवीं चीज़ क़ुरआन और भलाई की तरफ़ बुलाना है।

आप यह आसानी से समझ सकते हैं कि किसी इनसान की सबसे बड़ी ख़िदमत और उसके साथ सबसे बड़ी हमदर्दी इसके अलावा कुछ नहीं हो सकती कि आप उसे अल्लाह तआला के ग़ज़ब और उसकी आग से बचाकर उसकी ख़ुशी और उसकी जन्नत से जोड़ दें।

दुनिया की भूख-प्यास दुनिया की ज़िन्दगी के साथ ख़त्म हो जाएगी। यहाँ हर दुख-दर्द गुज़र जाएगा, मगर आख़िरत की भूख-प्यास कभी ख़त्म न होगी। वहाँ के दुख-दर्द से कभी छुटकारा नहीं मिलेगा। वहाँ का काँटों का खाना और ख़ून, पीप और खौलते हुए पानी के घूँट हमेशा का मुक़द्दर बन जाएँगे। इसलिए जिस ख़िदमत से किसी के लिए वहाँ की भूख-प्यास बुझने का सामान हो, उसे वहाँ के दुख-दर्द से निजात मिल जाए, वही ख़िदमत उसकी सबसे बड़ी ख़िदमत है। रोज़ेदार को इफ़तार कराने से उसके रोज़े का पूरा सवाब आपको भी मिलेगा, मगर उसी तरह किसी को नेकी और भलाई की राह पर लगा देने से तो उसकी नेकियों और भलाइयों का सारा सवाब उसके साथ-साथ आपको भी मिलेगा। सोचिए तो यह कभी न ख़त्म होनेवाला सिलसिला है सवाब का!

क़ुरआन की वजह से ही रमज़ान को इज़्ज़त व सम्मान हासिल हुआ है। फिर क़ुरआन के नाज़िल होने के महीने से ज़्यादा मुनासिब वक़्त इस काम के लिए क्या हो सकता है कि आप लोगों तक क़ुरआन मजीद का पैग़ाम पहुँचाएँ, उनको क़ुरआन की तालीमात से आगाह करें, उनको क़ुरआन की मिशन की तरफ़ बुलाएँ और उनको क़ुरआन की अमानत का हक़ अदा करने के लिए खड़ा करें।

रमज़ानुल-मुबारक में आपके अपने मामूल होते हैं। आपकी तवज्जोह अपने तज़किया, क़ुरआन की तिलावत, नफ़्ल नमाज़ और अपने लिए ज़्यादा से ज़्यादा नेकियाँ समेट लेने की तरफ़ होती है। लेकिन ऐसा न हो कि इस तवज्जो की वजह से यह सबसे बड़ी नेकी, नेकियाँ समेट लेने का कभी ख़त्म न होनेवाला रास्ता, आपकी निगाहों से ओझल हो जाए। अल्लाह की तरफ़ दावत और क़ुरआन की तरफ़ दावत का काम सिर्फ़ सबसे बड़ी नेकी और नेकियों के लिए सबसे ज़्यादा फ़ायदेमंद सरमायाकारी ही नहीं, ख़ुद आपके तज़किया व तर्बियत का सबसे असरदार ज़रिया भी है।

रमज़ानुल-मुबारक में आम मुसलमानों के दिल अल्लाह की तरफ़ और नेकी और भलाई की तरफ़ झुके होते हैं। इसलिए इस बात की ज़्यादा उम्मीद होती है कि वे आपकी बात ध्यान से सुनें, वह बात उनके दिलों में उतर जाए, वे उसको क़बूल कर लें और अपनी ज़िन्दगियाँ उस मक़सद के लिए लगाने या उसके लिए

कुछ करने पर तैयार हो जाएँ, जिसके लिए अल्लाह तआला ने अपने रसूल भेजे और क़ुरआन पाक नाज़िल किया।

इस बात के दो तरीक़े हो सकते हैं—

एक यह कि आप रमज़ान में नेक कामों का जो मामूल (प्रोग्राम) बनाएँ, उसमें अल्लाह की तरफ़ बुलाने, नेक बात करने, अल्लाह के दीन के लिए सरगर्म करने का काम भी शामिल कर लीजिए। इफ़तार पर बुलाएँ तो कुछ लम्हा इसपर गुफ़्तगू का मौक़ा निकालें, साथ काम करनेवालों के साथ बातचीत और मुलाक़ात हो तो यह बात उनके सामने रखें। बात रमज़ान के हवाले से करें और इस बात को क़ुरआन के मक़सद की अदायगी के लिए कुछ करने तक पहुँचाएँ।

अपने रिश्तेदारों और मिलनेवालों में कुछ लोगों के नाम अपने पास नोट कर लें और यह तय कर लें कि इस माह उनके साथ मुसलसल और ख़ास संपर्कों के ज़रिये उन्हें क़ुरआन का बताया हुआ काम करने के लिए आगे बढ़ाना है।

एक आरज़ू

ये दस चीज़ें मैंने आपके सामने अलग-अलग बयान की हैं, लेकिन आप ग़ौर करें तो ये सभी एक ही मक़सद के रिश्ते से बंधी हुई हैं और आपस में एक-दूसरे के साथ जुड़ी हुई हैं। वह रिश्ता यह है कि हम रमज़ान से वह तक़वा और क़ुव्वत और सलाहियत हासिल करें, जिससे हम क़ुरआन की अमानत का हक़ अदा करने के लायक़ बन जाएँ। यह मक़सद इसलिए सबसे अहम मक़सद है कि हमारी इनफ़िरादी (वैयक्तिक) और सामूहिक ज़िन्दगी की कामयाबी व सफलता सिर्फ़ क़ुरआन से जुड़ी हुई है और दुनिया में हमें इज़्ज़त और सरबुलंदी भी सिर्फ़ क़ुरआन के ज़रिया ही नसीब हो सकती है। आख़िरत में भी हमारी निजात और फ़लाह (सफलता) का दारोमदार इसी बात पर है कि हम क़ुरआन मजीद से क्या सुलूक करते हैं, उसकी बताई हुई राह पर कहाँ तक चलते हैं और उसके लानेवाले की पैरवी व इताअत कितनी करते हैं।

रमज़ान का मुबारक महीना हर साल आता है। एक के बाद दूसरा रमज़ान आता है और सदियों से आ रहा है। एक के बाद दूसरा क़ुरआन ख़त्म होता है और अनगिनत तादाद में होता है। हर रमज़ान में क़ुरआन की तिलावत होती है, रोज़े रखे जाते हैं, नमाज़ें पढ़ी जाती हैं, ज़िक्र और दुआ में रातें गुज़रती हैं लेकिन हम वहीं के वहीं रहते हैं, जहाँ रमज़ान शुरू होने से पहले थे। तक़वा से उतने ही महरूम रहते हैं, जितने रमज़ान के बग़ैर थे। न हमारे शख़्सी (व्यक्तिगत) हालात

में बदलाव आता है, न हमारे व्यक्तिगत अख़लाक़ में सुधार होता है, न हमारी क़ौमी व मिल्ली हालात में बदलाव घटित होता है, न हमारे ऊपर से ज़िल्लत व मस्कनत और ग़ुलामी व पस्ती के बादल छँटते हैं।— ऐसा क्यों है?

अव्वल तो इसलिए कि सोच-समझकर एहतिमाम और कोशिश के बग़ैर हम रमज़ान से वह चीज़ ज़्यादा हासिल नहीं कर सकते, जिसके ख़ज़ाने लुटाते हुए वह हर साल हमारे ऊपर हमारी हिफ़ाज़त और मदद करने को आता है। इस शुऊरी कोशिश और एहतिमाम से हम महरूम हैं, या उसकी तरफ़ से लापरवाह हैं।

इससे ज़्यादा यह कि हमारी हालत उस हालत से ज़्यादा क़रीब है, जिसके बारे में प्यारे नबी (सल्ल०) ने इस तरह सावधान किया है कि—

"जो झूठ बोलना और उसपर अमल करना न छोड़े, तो अल्लाह तआला को इस बात की कोई ज़रूरत नहीं कि वह अपना खाना-पीना छोड़ दे।"

(हदीस : बुख़ारी)

अल्लाह को अपना रब कहना, हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को उसका रसूल मानना, क़ुरआन को अल्लाह की किताब तस्लीम करना, फिर न यह जानने की कोशिश करना कि ये सब हमसे क्या कहते हैं; न इसपर अमल करना—आख़िर यह सब झूठ और झूठ पर अमल नहीं तो और क्या है? मुनाफ़िक़ अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के पास आते और कहते कि आप (सल्ल०) अल्लाह के रसूल हैं। अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि ये बात तो सच्ची कहते हैं, लेकिन हैं झूठे। यानी कि ज़बान से सच्ची बात कहने के बावजूद भी इनसान झूठा हो सकता है अगर वह इस सच्ची बात के तक़ाज़े न माने और उनके मुताबिक़ अमल न करे।

दूसरे इसलिए कि हमारी इबादत का, हमारी नमाज़ों का, हमारे रोज़ों का, हमारे आमाल (कर्मों) का और हमारी सरगर्मियों का रिश्ता इस मक़सद से कट चुका है जो क़ुरआन लेकर आया था तथा जिसके लिए रमज़ान के रोज़े फ़र्ज़ किए गए थे। सब कुछ इसी लिए था कि हम क़ुरआन को ख़ुदा के बन्दों तक पहुँचाएँ, उसके साँचे में अपने आपको भी और अपने समाज को भी ढालें, क़ुरआन को क़ायम करें और इस माह में सब्र व इस्तिक़ामत से जिद्दोजुहद करें और क़ुरबानियाँ दें।

रमज़ान का मुबारक महीना हर बार फिर यह पुकारता हुआ आता है कि आओ और जानो कि अल्लाह तआला ने क़ुरआन मजीद में तुमसे क्या कहा है।

आओ और हर उस चीज़ को तर्क कर दो, चाहे वह तुम्हें कितनी पसन्दीदा व महबूब हो, जिससे अल्लाह तआला ने तुम्हें रोका है।

वरना हो सकता है और इससे बड़ी बदक़िस्मती तुम्हारी और क्या हो सकती है कि रमज़ान तुम्हारे पास आए, तुम रोज़े भी रखो, भूख-प्यास भी बर्दाश्त करो, रातों की नींदें क़ुरबान करके तरावीह भी पढ़ो और उसके बाद भी सिवाय भूख-प्यास और रतजगे के और कुछ तुम्हारे हाथ न आए। बल्कि कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे ऊपर यह मिसाल सादिक़ आ जाए जो अल्लाह तआला ने तौरात के धारकों के बारे में बयान फ़रमाई है—

> "जिन लोगों पर तौरात की अमानत का बोझ डाला गया, फिर उन्होंने इस अमानत को निभाने का हक़ न अदा किया, उनकी मिसाल उन गधों की-सी है, जो अपनी पीठ पर किताबों का बोझ उठाए फिरते हों।"
>
> (क़ुरआन, 62 : 5)

या कहीं अल्लाह के रसूल (सल्ल०) रमज़ान और क़ुरआन के हवाले से अल्लाह तआला की अदालत में हमारे ख़िलाफ़ दावा लेकर खड़े न हो जाएँ। क़ुरआन में है—

> "और रसूल कहेगा, मेरे रब, मेरी क़ौम ने इस क़ुरआन को छोड़ रखा था।"
>
> (क़ुरआन, 25 : 30)

अल्लाह तआला हम सबको रमज़ान के मुबारक महीने में वह तक़वा हासिल करने की तौफ़ीक़ अता करे जिससे हम क़ुरआन मजीद की हिदायत के हक़दार हों, हम क़ुरआन का इल्म हासिल करें, उसपर अमल करें। अल्लाह तआला हमें क़ुरआन का पैग़ाम लेकर खड़ा होने और उसको क़ायम करने के लिए संघर्ष करने की हिम्मत, हौसला, अज़्म (पक्का इरादा) और शौक़ व लगन प्रदान करे—आमीन!

(3)

रोज़ा के आदाब व हक़ीक़त

● *इमाम अबू हामिद मुहम्मद ग़ज़ाली रह०*

हक़ीक़ी रोज़ा के लिए जो अंगों को गुनाहों से रोकता है, छः आदाब सामने रखना ज़रूरी हैं—

1. निगाह का रोज़ा : पहला अदब यह है कि नज़र नीची रखो। जिन चीज़ों की तरफ़ निगाह डालना अल्लाह तआला को नापसंद है, उनकी तरफ़ निगाह को न जाने दो। जिन चीज़ों को देखने से दिल भटकता हो और अल्लाह की याद से ग़फ़लत तारी होती हो, उनको न देखो।

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया—

"नज़र डालना (ऐसी चीज़ों पर जिनसे अल्लाह ने रोका है) शैतान के तीरों में एक ज़हर में बुझा हुआ तीर है। जो कोई अल्लाह के डर से बदनिगाह से रुक जाए, अल्लाह तआला उसके दिल में ईमान की मिठास का मज़ा अता करेगा।"

हज़रत जाबिर (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल मुहम्मद (सल्ल०) ने कहा—

"पाँच चीजें ऐसी हैं जिनसे रोज़ा टूट जाता है। एक झूठ, दूसरे ग़ीबत, तीसरे चुग़ली, चौथे झूठी क़सम और पाँचवीं वासना की नज़र।"

2. ज़बान का रोज़ा : दूसरा अदब यह है कि ज़बान से बेहूदा बात न करो, झूठ न बोलो, ग़ीबत न करो, चुग़ली न खाओ, बेशर्मी की बातें न करो, अत्याचार व ज़्यादती करने की बात न करो, झगड़ा न करो, वादा करके वादा न तोड़ो और न कोई बात काटो। ज़बान का रोज़ा यह है कि ख़ामोश रहे, उससे होनेवाले गुनाहों से बचे और उसे अल्लाह की याद और क़ुरआन की तिलावत में मशग़ूल (व्यस्त) रखे।

सुफ़ियान सौरी (रह०) कहते हैं कि ग़ीबत से रोज़ा टूट जाता है। मुजाहिद (रह०) ने कहा कि दो चीज़ों से रोज़ा टूट जाता है—एक ग़ीबत से, दूसरे झूठ से।

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया—

"रोज़ा ढाल है (गुनाहों से बचाव के लिए)। तुममें से कोई रोज़ा से हो तो न बेशर्मी की बात करे, न बदकलामी और फ़ुज़ूल बकवास करे, न चीख़े-चिल्लाए और अगर कोई गाली दे या लड़ने पर उतर आए तो कह दे कि मैं रोज़े से हूँ।"

एक हदीस में है कि हुज़ूर (सल्ल०) के ज़माने में दो औरतों ने रोज़ा रखा। दिन गुज़रने के बाद भूख और प्यास की शिद्दत से उनकी हालत ख़राब हो गई। उन्होंने हुज़ूर (सल्ल०) की ख़िदमत में आदमी भेजा और इफ़तार की इजाज़त माँगी। आप (सल्ल०) ने उस आदमी को एक प्याला दिया और हुक्म किया कि उन दोनों से कहना कि जो कुछ तुमने खाया है इस प्याला में 'क़ै' कर दो। एक औरत ने क़ै की तो उससे आधा प्याला ताज़ा गोश्त और ख़ून से भर गया। दूसरी ने क़ै की तो प्याला पूरा भर गया। लोगों को बहुत ताज्जुब हुआ! अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया कि इन दोनों ने उस ग़िज़ा (खाने) से तो रोज़ा रखा जो अल्लाह ने हलाल की है, लेकिन जो चीज़ उसने हराम की है उसे खाती रहीं। वे एक-दूसरे के पास बैठीं तो दोनों ने लोगों की ग़ीबत शुरू कर दी, दोनों ने लोगों का जो गोश्त खाया था वही गोश्त प्याले में है।

3. कान का रोज़ा : तीसरा अदब यह है कि कानों को बुरी बात सुनने से रोको। इसलिए कि जिन बातों का ज़बान से निकालना हराम है, उनका सुनना भी हराम है। इसी वजह से अल्लाह तआला ने कानों से झूठ सुननेवालों और हराम का माल खानेवालों का ज़िक्र साथ-साथ फ़रमाया है—

"ये कान लगाकर झूठ सुननेवाले और हराम का माल खानेवाले।"

(क़ुरआन, 5 : 42)

इसी तरह उसने यह भी इरशाद फ़रमाया—

"क्यों उनके उलमा और पीर उन्हें गुनाह की बात कहने और हराम खाने से नहीं रोकते।" (क़ुरआन, 5 : 63)

ग़ीबत सुनना और ख़ामोश रहना भी हराम है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया है—

"फिर तो तुम भी उन्हीं की तरह हुए।"

इसी लिए अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया—

"ग़ीबत करनेवाला और सुननेवाला दोनों गुनाह में बराबर के साझीदार हैं।"

4. अंगों का रोज़ा : चौथा अदब यह है कि हाथ-पाँव और दूसरे अंगों को गुनाहों से रोको और इफ़तार के वक़्त ऐसे खाने से बचो जिसके बारे में हराम होने की आशंका हो। अगर दिन भर वह खाना भी न खाए जो हलाल है और इफ़तार हराम खाने से करे, तो क्या उसका रोज़ा हुआ? शरीअत कहती है रोज़ा नहीं हुआ। ऐसे रोज़ेदार की मिसाल ऐसी है जैसे एक व्यक्ति महल बनाए, लेकिन पूरे शहर को ध्वस्त कर दे।

वैसे भी अगर ज़रूरत से ज़्यादा खाया जाए तो हलाल खाना भी रूह के लिए नुक़सानदेह होता है। इसी लिए रोज़ा खाना कम करने की तर्बीयत करता है। वह बहुत बेवक़ूफ़ होगा जो दवा तो ज़्यादा न खाए कि नुक़सान करेगी, लेकिन ज़हर खा ले। हराम खाना ज़हर है जो दीन को बरबाद करता है। हलाल खाना एक दवा की तरह है, जिसका कम खाना फ़ायदेमंद है और ज़्यादा खाना हानिकारक है।

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया—

"कितने ही रोज़ेदार ऐसे हैं, जिन्हें अपने रोज़े से भूख और प्यास के सिवा कुछ नहीं मिलता।"

कुछ आलिम कहते हैं कि यह वह रोज़ेदार है, जो हराम खाने से रोज़ा इफ़तार करे। कुछ ने कहा है कि वह शख़्स मुराद है जो रोज़े के दौरान हलाल खाने से तो रुका रहे, किन्तु लोगों का गोश्त खाता रहे। यानी ग़ीबत करता रहे, जो हराम है और कुछ की राय यह है कि यह वह व्यक्ति है जो अपने अंगों को गुनाहों से न बचाए।

5. हलाल रोज़ी : पाँचवाँ अदब यह है कि इफ़तार के वक़्त हलाल खाना भी कम ही खाओ। इतना न खाओ कि पेट फूल जाए। इसलिए कि अल्लाह के नज़दीक हलक़ तक भरे हुए पेट से ज़्यादा नापसंदीदा कोई भर जानेवाली चीज़ नहीं, अगरचे खाना हलाल हो। शैतान पर ग़ालिब आने और शह्वत (वासना) की तीव्रता तोड़ने में रोज़े से क्या मदद मिलेगी, अगर रोज़ेदार इफ़तार के वक़्त दिन भर की भूख-प्यास की तलाफ़ी (पूर्ति) कर दे और एक वक़्त में इतना खा ले जितना दिन भर में खाता था। इफ़तार के वक़्त खाने की क़िस्में तरह-तरह की होती हैं। चुनाँचे रमज़ान के दिनों में अच्छे और उम्दा खाने इतने ज़्यादा खा जाते हैं कि और दिनों में कई महीने भी न खाएँ।

ज़ाहिर है कि रोज़े का मक़सद तो ख़ाली पेट रहना और नफ़्स की ख़्वाहिशों को क़ाबू में रखना है, ताकि नफ़्स (मनोवृत्ति) में तक़वा पैदा हो। अब अगर कोई

सुबह से शाम तक तो पेट खाली रखे फिर स्वादिष्ट और मज़ेदार खाने से ख़ूब पेट भर ले, तो नफ़्स की ख़्वाहिशें तो और दोगुनी हो जाएँगी और ऐसी ख़्वाहिशें पैदा हो जाएँगी जो रोज़ा न रखता तो न पैदा होतीं। बेहतर यह है कि रात को भी अपना पेट इतना ख़ाली रखे कि तहज्जुद और दूसरे वज़ीफ़ों में आसानी हो, शैतान दिल के पास न आने पाए और फ़रिश्तों की दुनिया के दीदार से फ़ैज़याब हो सके। हालाँकि सिर्फ़ पेट का ख़ाली रखना भी काफ़ी न होगा, जब तक वह अपनी फ़िक्र और इरादे को अल्लाह के अलावा हर मक़सूद से ख़ाली न कर ले।

6. **ख़ौफ़ और उम्मीद** : छठा अदब यह है कि रोज़ा इफ़तार करने के बाद ख़ौफ़ और उम्मीद की कैफ़ियत तारी हो। उम्मीद यह रखे कि अल्लाह तआला उसका रोज़ा क़बूल करेगा और उसे अपने क़रीबवालों में शामिल करेगा। साथ ही डरे कि शायद उसका रोज़ा क़बूल न किया जाए और वह अल्लाह के ग़ज़ब (प्रकोप) का हक़दार ठहरे। हक़ीक़त यह है कि हर इबादत से फ़ारिग़ होने के बाद यही कैफ़ियत होनी चाहिए।

ये रोज़ा के वे छः आदाब है जिनको सामने रखने ही से रोज़ा हक़ीक़ी मानों में सही होता है। अबू दरदा (रज़ि०) कहते हैं कि अक़्लमंद आदमी का सोना और रोज़ा न रखना भी अच्छा है और बेवक़ूफ़ आदमी का रोज़ा रखना और जागना भी बुरा है। कहा गया है कि यक़ीन और तक़वा के साथ ज़र्रा बराबर इबादत, ग़लत कामों के साथ की हुई पहाड़ के बराबर इबादत से अफ़ज़ल (श्रेष्ठ) है। कुछ आलिमों ने कहा है कि बहुत-से रोज़ेदार हक़ीक़त में बेरोज़ा होते हैं और बहुत-से बेरोज़ा, रोज़ेदार होते हैं। बेरोज़ा रोज़ेदार वे हैं जो खाते-पीते तो हैं, लेकिन अपने अंगों को गुनाहों से महफ़ूज़ रखते हैं और रोज़ेदार बेरोज़ा वे हैं जो खाने-पीने से तो रुक जाते हैं लेकिन अपने अंगों को गुनाहों से नहीं रोकते।

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने फ़रमाया है—

"रोज़ा एक अमानत है, हर एक को अपनी अमानत की हिफ़ाज़त करनी चाहिए।"

जब आप सल्ल (सल्ल०) ने यह आयत पढ़ी (जिसका मतलब यह है कि)—

"अल्लाह तुम्हें हुक्म देता है कि अमानतें उनके मालिकों के सुपुर्द करो।"

तो आप (सल्ल०) ने अपने पवित्र हाथों को अपने कान और आँख पर रखा और फ़रमाया कि कान से सुनना और आँख से देखना भी अमानत है।

रोज़ा और इनसानियत

● *ज़ैनुल आबिदीन मंसूरी*

ख़ुदा का ख़ौफ़ एक ऐसी बुनियाद है जिसपर एक पुरअम्न समाज, एक कामयाब निज़ाम और मिसाली इनसानियत का क़याम और बक़ा का दारोमदार है। कुरआन मजीद में इनसानों के अन्दर यही ख़ुदा का ख़ौफ़ (तक़वा) पैदा करना रोज़े का असल मक़सद बताया गया है (2 : 183)। यहाँ हम मुख़्तसर तौर पर कुछ ऐसी इनसानी ख़ूबियों की तरफ़ इशारा करेंगे जो रोज़े के ज़रिये इनसान और समाज के अन्दर फलती-फूलती, मज़बूत होती और आम इनसानी ज़िन्दगी का हिस्सा बन जाती हैं।

● ख़ुदा के हर वक़्त, हर जगह, अँधेरे-उजाले और तन्हाई में, इनसान की हर अच्छे-बुरे काम पर, उसकी नज़र होने का एहसास और यक़ीन मज़बूत होता है। रोज़े के ज़रिये से रोज़ाना एक महीने तक दस से चौदह घंटे रोज़ेदार को यह एहसास और यक़ीन मज़बूत करने की तरबियत दी जाती है। इनसान के अन्दर इनसानियत की ऐसी ख़ूबी पैदा की जाती है जो पुलिस और अदालत के डर और सज़ा या जुर्माने के ख़ौफ़ के बिना ही बुराइयों से, अत्याचारों से और भ्रष्टाचार से ख़ुद अपनी मरज़ी से बच सके।

● इनसानों से मुहब्बत, उनके साथ नरमी, माफ़ी, मदद, ख़िदमत और भाईचारे वग़ैरह का बेहतरीन सुलूक करने की जो आम तालीम इस्लाम ने अपने माननेवालों को दी है, इस बेहतरीन तालीम को अमल में लाने के लिए रमज़ान के महीने में ख़ास ज़ोर दिया है और बताया गया है कि रमज़ान में किए गए इन भले कामों का बदला आख़िरत में आम दिनों के मुक़ाबले सत्तर गुना ज़्यादा मिलेगा। इसलिए रोज़े रखनेवाले की यह बड़ी कोशिश होती है कि वह रमज़ान में इस तरह के ज़्यादा से ज़्यादा भले काम करके ख़ुदा की ख़ुशी हासिल करे। इसका फ़ायदा यह भी होता है कि रमज़ान के बाद भी आदमी इन नेक कामों को करने की कोशिश करता है।

● रोज़े के ज़रिये इनसान को अख़लाक़ी और सामाजिक बुराइयों से बचने की तरबियत भी दी जाती है। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया कि जिसने

रोज़ा रखकर भी झूठ बोलना न छोड़ा तो अल्लाह को इससे कोई मतलब नहीं कि वह दिन-भर भूखा-प्यासा रहा। झूठ की ही तरह गाली-गलौच, ग़ुस्सा, लड़ाई-झगड़ा, किसी की पीठ पीछे बुराई, चुग़ली, किसी पर झूठा इलज़ाम या तोहमत, किसी को बेइज़्ज़त करना, नामुनासिब और बेशर्मी वग़ैरह बुरी आदतों से बचने की ताक़त और सलाहियत रोज़े के ज़रिये लोगों में पैदा की गई है।

● ख़ुशहाल और अमीर लोगों को रोज़ा रखकर इस बात का अमली तजुर्बा होता है कि ग़रीब, मुहताज और परेशानहाल इनसानों को भूख किस तरह सताती है। इस तरह उन ख़ुशहाल लोगों के दिलों में कमज़ोरों और महरूमों के लिए नरमी और हमदर्दी का जज़्बा पैदा होता है।

● समाज के ग़रीब लोगों से ख़ुशहाल लोगों का दिली ताल्लुक़ जोड़े रखने और उनके साथ अपनाइयत, हमदर्दी और ख़ैरख़्वाही का सुलूक करने की तरबियत रमज़ान में दी जाती है। इसी लिए अगर कोई आदमी किसी मजबूरी की बिना पर रोज़ा न रख सके तो शरीअत का हुक्म है कि या तो बाद में रोज़ा रखे या बदले के तौर पर एक ग़रीब को खाना खिलाए और अगर बिना मजबूरी एक रोज़ा भी छोड़ दिया तो ऐसी हालत में एक रोज़े के बदले साठ रोज़े रखने होंगे या साठ ग़रीबों और मुहताजों को खाना खिलाना होगा।

● एक महीना रोज़ा रखने के बाद ईद की नमाज़ शुक्र और ख़ुशी के तौर पर पढ़ी जाती है। इस्लामी तालीम के मुताबिक़ इस नमाज़ से पहले घर के हर शख़्स—बच्चे-बड़े, औरत-मर्द सबकी तरफ़ से एक तयशुदा रक़म या सामान ग़रीबों और मुहताजों को देना लाज़िमी है। इसके बिना उस शख़्स के रोज़े अल्लाह के यहाँ क़बूल नहीं होंगे, और यह हुक्म अल्लाह ने इसलिए दिया है कि ईद के दिन कोई ख़ुशी मनाने और खाने-पीने से महरूम न रह जाए।

रोज़े के ज़रिये एक महीने तक अनेक इनसानी ख़ूबियों को पैदा करने और उन्हें परवान चढ़ाने की तरबियत से ख़ुदा की यह महान और बेमिसाल इबादत अगले ग्यारह महीनों तक इनसान और समाज के लिए इनसानियत की राह हमवार करती रहती है, और यह सिलसिला हर साल जारी रहता है।